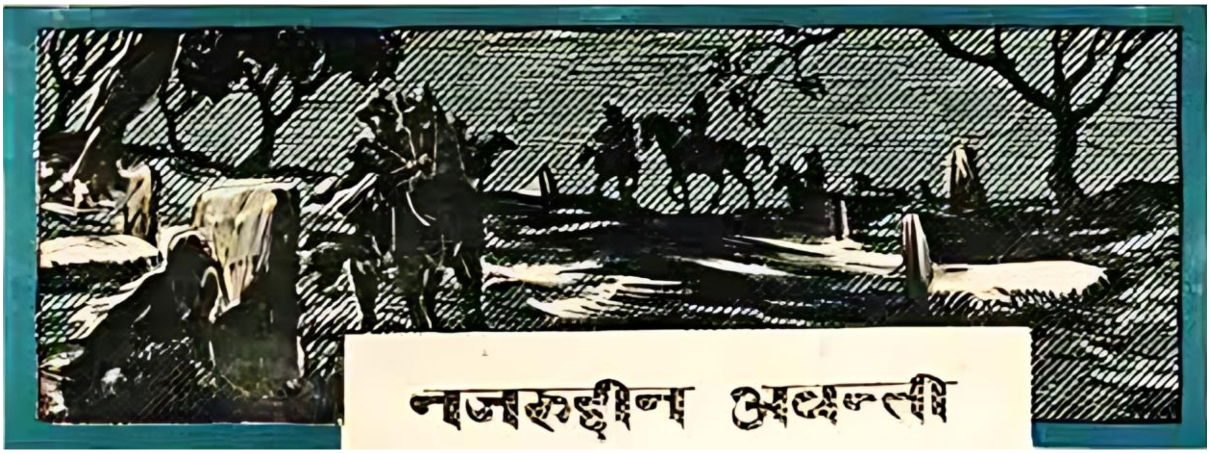

50



चीन में नजुरुद्दीन अवन्ती नाम का कोई हँसोड़ था। उसकी कई हास्य कथाएँ हैं।

एक दिन रात को श्मशान के पास से वह जा रहा था। उसके पीछे कुछ आदमी घोड़े पर सवार होकर आ रहे थे। अवन्ती को सन्देह हुआ कि वे चोर थे। वह एक कब्र में छुप गया। घुड़सवारों को भी उसे छुपता देखकर सन्देह हुआ। इसलिये उन्होंने उसके पास आकर पूछा-"तुम कौन हो?" अवन्ती ने कब्र में से सिर बाहर निकालकर कहा-"मैं मरा हुआ हूँ। मुझे कल में गाड़ दिया गया है।"

"इस आधी रात के समय मरे हुओ को बाहर निकलने का क्या काम है?" घुड़सवारों ने पूछा।

"ठण्डी हवा के लिए आया हूँ।" अवन्ती ने कहा।

"भूतों को भी ठण्डी हवा की जरूरत होती है क्या?" उन लोगों ने पूछा।

"जरूरत नहीं है, मैंने गलती की है।" कहकर अवन्ती कब्र में घुस गया।

एक और दिन अवन्ती के घर चोर आया। अवन्ती चोर को देखकर एक सन्दूक में छुप गया। चोर ने सारा घर टटोला। कहीं कुछ न मिला। आखिर उसने सन्दूक खोला-"ओहो, तो तुम यहीं हो!"

"जो तुम चाहते हो वह मेरे घर में न मिलेगा। यह सोच में शर्म के मारे इसमें छुप गया।" अवन्ती ने कहा।

फिर एक बार अवन्ती के घर में चोर आये। घर का सारा सामान उन्होंने उठाकर ले जाना शुरू किया एक दो चीजें लेकर अवन्ती उनके पीछे चला। चोरों में से एक ने पीछे मुड़कर देखा। "अरे अवन्ती! आधी रात के समय कहाँ निकले हो?" उन्होंने पूछा।

रामदीन

कुछ नहीं, मैं मकान बदलने की सोच रहा था। पर सामान भिजवाने के लिए मेरे पास गाड़ी का भाड़ा न था। आज तुम्हारी मेहरबानी से घर बदलने का मौका मिला है।" अवन्ती ने कहा।

"तुम्हें सूर्य पसन्द है या चन्द्रमा?" अवन्ती से एक मित्र ने पूछा।

"चन्दामामा" अवन्ती ने कहा।

"क्यों?" मित्र ने सवाल किया।

"देख, सूर्य तब आता है जब पहले ही दिन में प्रकाश होता है.... और चन्दामामा अन्धेरे में आकर प्यारा प्यारा प्रकाश देता है।"

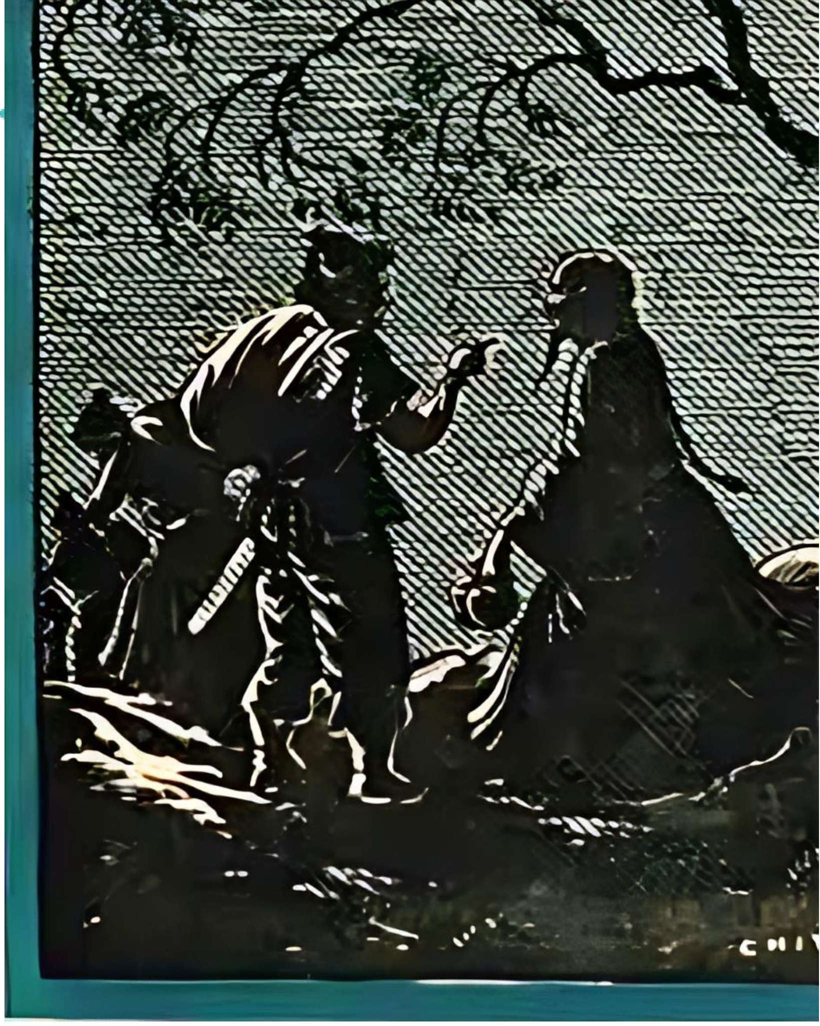
"संसार के पानी में अगर आग लग जाये तो तब मछलियों का क्या होगा?" किसी ने अवन्ती से पूछा।

"अगर यही हो तो क्या मछलियाँ पेड़ पर नहीं चढ़ बैठेंगी?" अवन्ती ने कहा।

"सबेरे होते ही सब इधर उधर चले जाते हैं। इसका क्या कारण है?" अवन्ती के कुछ मित्रों ने पूछा।

"अरे पगलो! यह भी नहीं जानते। अगर सब एक ही दिशा में जायें तो क्या भूमि उस तरफ झुक नहीं जायेगी?" अवन्ती ने कहा।

"जब शव को कब्रिस्तान ले जाते हैं तो ताबूत के पीछे रहना अच्छा है



या आगे?" अवन्ती से किसी ने कहा।

"ताबूत में अगर न रहना पड़ जाये तो दोनों ही अच्छे हैं।" अवन्ती ने कहा।

एक दिन अवन्ती को एक भेड़ दिखाई दी। वह उसे घर ले गया। उसे काट कर उसने खा भी लिया, यह जानकर एक मित्र ने अवन्ती से कहा-"इस पाप के लिए तुम भगवान के सामने क्या जवाब दोगे?"

"मैं कह दूँगा कि मैंने भेड़ नहीं खाई है।" अवन्ती ने कहा।

"अगर भेड़ तुम्हारे विरुद्ध गवाही देने आये तो?" मित्र ने पूछा। "भेड़ आई तो मामला सीधा है। उसे ले जाकर वापस उसके मालिक को दे दूँगा।" अवन्ती ने कहा।

एक दिन अबन्ती को पैसों की जरुरत हुई। बोझा ढोकर पैसा कमाने के उद्देश्य से अवन्ती रस्सियाँ लेकर बाजार में गया। वहाँ एक आदमी बहुत-से चीनी मिट्टी के बर्तन खरीद कर एक लकड़ी के सन्दूक में रख कुली की इन्तजार कर रहा था। क्योंकि वह मजदूरी के बदले तीन सलाह देना चाहता था इसलिए उसे कोई कुली न मिला। "पैसा तो कभी भी कमाया जा सकता है। पर अच्छी सलाह हमेशा नहीं मिलती।" यह सोच अवन्ती उस सन्दूक को ढोने के लिए तैयार हो गया।

जब दोनों मिलकर उस आदमी के घर जा रहे थे तो अवन्ती ने पूछा- "आप क्या सलाह दे रहे हैं, जरा बताइये तो।"

"अगर कोई कहे कि खाना खाने की अपेक्षा फाके करना अच्छा है, तो विश्वास न करो।" उस आदमी ने कहा। "अच्छी बात है।" अवन्ती ने सोचा।

कुछ दूर जाने के बाद उस आदमी ने कहा-"अगर कोई कहे की किसी सवारी पर जाने की अपेक्षा पैदल चलना अच्छा है तो उसका विश्वास न करो।" अवन्ती को यह बात भी ठीक जँची।

फिर थोड़ी दूर जाने के बाद उस आदमी ने कहा-"अगर कोई कहे कि तुमसे अधिक बुद्धू कुली कहीं है तो तुम विश्वास न करो।" तुरन्त अवन्ती ने सिर पर रखा सन्दूक नीचे फेंक कर कहा-"कोई कहे कि इसके अन्दर रखे बर्तन नहीं टूटे हैं तो विश्वास न करना।" यह कह कर अवन्ती ने उस आदमी से बदला ले लिया।





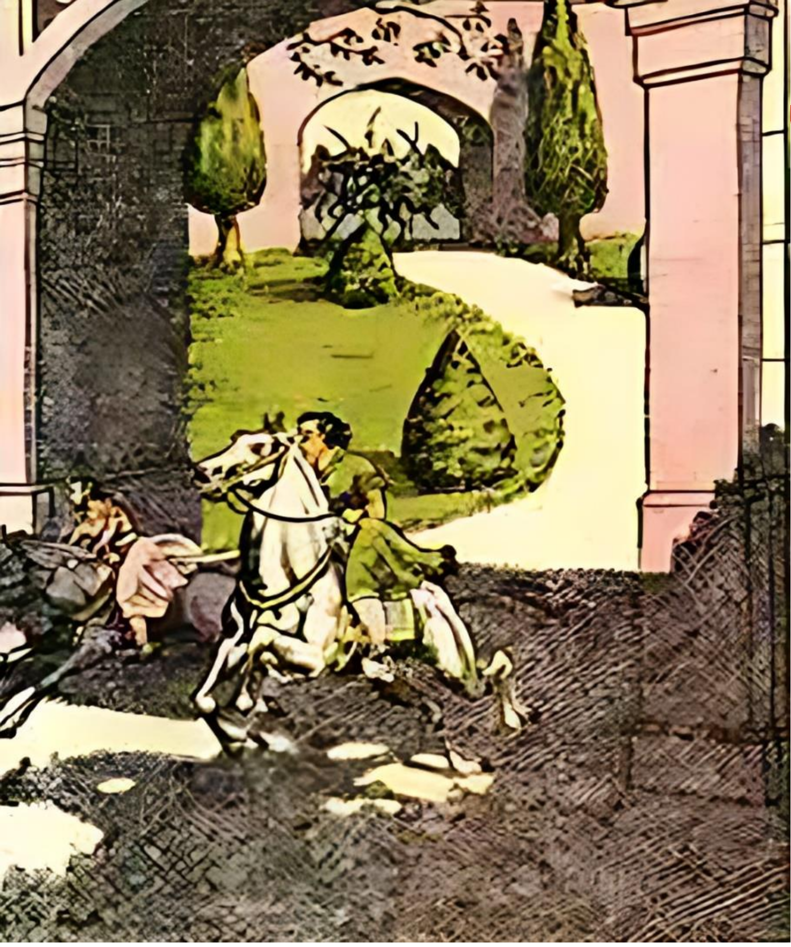
[५]

[पीछा करते सैनिकों से बचकर सुबाहू राजधानी पहुँचा। उसने चन्द्रवर्मा से कहा कि शत्रु धोखा देकर नगर में प्रवेश कर रहे थे। उसके बाद, चन्द्रवर्मा अपने सेनापति श्रीमह को लेकर नगर में गया। उसने कई शत्रुओं का संहार किया। परन्तु इतने में मालूम हुआ कि सर्पकेतु और साथियों को लेकर वहाँ आ पहुँचा था। चन्द्रवर्मा अपने सैनिकों को लेकर.... तुरन्त... किले की रक्षा के लिए गया। तब तक शत्रु उसे घेर चुके थे और वे फाटक तोड़ रहे थे। चन्द्रवर्मा अपने सेनिकों को लेकर उनका मुकाबला करने लगा। बाद में]

चन्द्रवर्मा के सैनिकों और सर्पकेतु के सैनिकों में दुर्ग के मुख्य द्वार के पास भीषण युद्ध हुआ। यद्यपि वे संख्या में चौगुने थे तो भी सर्पकेतु के सैनिक चन्द्रवर्मा के सैनिकों का मुकाबला न कर सके। वे पीछे हटे। पर इतने में उन्हें मालूम हुआ कि उनकी संख्या कम थी।

इससे उनका हौसला बढ़ा। फिर वे अधिक जोश से लड़ने लगे। धड़ाधड़ दोनों पक्षों के सैनिक मरने लगे।

कुछ देर तक इस प्रकार युद्ध चलता रहा। बहुत कोशिश करने पर भी जब चन्द्रवर्मा दुर्ग के द्वार से अन्दर न जा सका और सोच न सका कि क्या किया जाय,



सेनानी धीरमल्ल भी आनेवाली विपत्ति के बारे में चिन्तित था। सैनिकों की ऊँची आवाज़ में उसने जोर से कहा-"युवराज, जैसे भी हो यत्न से आपका बाहर निकल जाना अच्छा है। मैं, अपने सैनिकों को लेकर आपका रास्ता दिखाऊँगा।"

चन्द्रवर्मा के पास सोचने के लिए भी समय न था। शत्रु दल, पीछे से जल्दी जल्दी चला आ रहा था, घोड़ों को दुर्ग के द्वार से पीछे मोड़ते हुए वह चिल्लाया-"सुबाहू!" और तलवार लेकर, शत्रु-सेना को चीरता भाग निकला। सुबाहू ने अपने मालिक के पीछे अपना घोड़ा भगाया।

चन्द्रवर्मा और सुबाहू को भागता देखकर कुछ शत्रु सैनिकों ने उनका पीछा किया। परन्तु सेनापति धीरमल्ल ने उन्हें रोका। वह उनसे युद्ध करने लगा। यह मौका देख चन्द्रवर्मा और सुबाहू युद्ध भूमि दूर से भाग गये।

वे दोनों इस प्रकार कुछ दूर राज-मार्ग पर गये। फिर उन्होंने अपने घोड़ों को

तब दूर से उसे एक और आश्विक दल के आने की आवाज़ सुनाई दी। उसकी घबराहट बढ़ी।

तुरत सुबाहू ने अपने घोड़े को चन्द्रवर्मा के घोड़े के पास ले जाकर कहा-"युवराज! हम एक बड़ी बिपत्ति में फँसनेवाले हैं। हमें पीछे से खदेड़ने के लिए सर्पकेतु और आश्विकों को रणस्थल में भेज रहा है। उसके साथ एक बड़ी सेना मालूम होती है।"

चन्द्रवर्मा ने जान लिया कि उन परिस्थितयों में, उसके लिए दुर्ग में प्रवेश करना सम्भव न था। उसे लगा कि दो शत्रु दलों के शिकञ्जे में से निकलना ही उस समय उसका कर्तव्य था।

नगर के दक्षिण द्वार की ओर दौड़ाया। अगर उनको नगर से बाहर निकलना था तो वे शायद इस दक्षिण द्वार से ही बाहर निकल सकते थे। वे जानते थे कि बाकी सब द्वार शत्रुओं के आधीन थे। उनमें से जाना असम्भव था।

चन्द्रवर्मा और सुबाहू दक्षिण द्वार के समीप थे कि उन्होंने अपने घोड़े रोक कर देखा कि कहीं वहाँ शत्रु तो नहीं हैं। वहाँ शत्रुओं की कोई बड़ी टुकड़ी न थी। कुछ लोग उस रास्ते बाहर आ जा भी रहे थे। पाँच-छः शत्रु सैनिक द्वार के एक तरफ खड़े बात कर रहे थे। उनके घोड़े कुछ दूरी पर बन्धे थे। वहाँ कोई युद्ध नहीं हो रहा था।

"युवराज! सेनापति धीरमल अभी शत्रु सैनिकों को हमारा पीछा करने से रोक रहा होगा। परन्तु अपने इने-गिने सैनिकों को लेकर, वह शत्रुओं का बहुत देर तक सामना न कर सकेगा। इसलिए हमारा नगर से बाहर चला जाना ही अच्छा है। आइये, एक दौड़ में बाहर चले जायें।"

चन्द्रवर्मा ने स्वीकृति में सिर हिलाकर घोड़े को ऐंड मारी। उसी



समय बात करते शत्रु सैनिकों की नज़र उन पर पड़ी। वे चौके। म्यानों में से तलवार निकाल कर "होश" कहते अपने घोड़ों की ओर भागे।

"सुबाहू! हमें तुरन्त द्वार पार करके चले जाना चाहिये। घोड़े को बिना रोके चले जाओ। अगर ये तुम्हारी तलवार की पहुँच में आयें तो इन शत्रुओं का शिकार करते जाना।" यह कहकर चन्द्रवर्मा ने यकायक अपना घोड़ा द्वार की ओर सरपट दौड़ाया।

इस बीच, शत्रु सैनिकों में से तीन अपने घोड़ों के पास पहुँच गये और



उन्हें वे खोलने लगे। दो सैनिक द्वार रोके खड़े थे। "ठहरो! नहीं तो प्राण नहीं बचेंगे!" उन्होंने तलवार निकालकर चिल्लाकर कहा।

"किसके प्राण नहीं बचेंगे?" कहते कहते तेज़ी से भागते अपने घोड़े पर से झुककर, सुबाहू ने एक सैनिक का सिर धड से अलग कर दिया। दूसरे सैनिक पर चन्द्रवर्मा ने तलवार उठाई ही थी कि वह झट झुक गया और ज़मीन पर लुढ़क गया। इतने में शत्रु सैनिक, घोड़ों पर चढ़कर, चन्द्रवर्मा और सुबाहू के पीछे दौड़े।

चन्द्रवर्मा ने पीछे मुड़कर न देखा। वह तेज़ी से सीधे रास्ते पर हवा से बातें करता भागा जा रहा था।

चन्द्रवर्मा और पीछे सुबाहू बहुत तेज़ी से आगे जा रहे थे। उनसे कुछ दूरी पर चार शत्रु सैनिक ललकारते हुए भागे आ रहे थे।

"युवराज! अच्छा है कि हम रुककर इन शत्रुओं का खातमा करें, नहीं तो हमारा ये पीछा न छोड़ेंगे। चलते चले आयेंगे।" सुबाहू ने पीछे मुड़कर कहा।

"हम लोगों का रुकना बड़ा खतरनाक है। अब तक सर्पकेतु को मालूम हो गया होगा कि हम नगर से भाग गये हैं। वह जरूर एक बड़ी सेना लेकर हमारा पीछा करेगा। इन शत्रुओं को पीछा करने दो। वे जो पहाड़ दीख रहे हैं, वहाँ पहुँचकर हम इन लोगों की खबर लेंगे। अब हमारा इनसे लड़ाई करना अक्लमन्दी का काम नहीं है।" चन्द्रवर्मा ने कहा।

चन्द्रवर्मा ने अभी बात खतम ही की थी कि पीछे से एक बाण सनसनाता आया और उसके दायें हाथ को खरोंचता रास्ते के एक तरफ़ गिर गया। "सुबाहू"

चन्द्रवर्मा चिल्लाया और घोड़े के गले से चिपककर लिपट गया। और घोड़े की चाल बिना धीमी किये चलता गया।

"अब तक मैं जिन्दा हूँ, युवराज!" उसने भी घोड़े के गले से चिपके चिपके पीछे की ओर मुड़कर देखा।

शत्रुओं में से एक सैनिक हाथ में दो बाण लेकर, उनकी ओर निशाना लगा रहा था, उसने घोड़े की लगाम मुख में ज़ोर से पकड़ रखी थी। इस दृश्य को देखकर सुबाहू को आश्चर्य हुआ और भय भी।

यह वह चन्द्रवर्मा से कहनेवाला था कि शत्रु-घुड़सवार के घोड़े का पैर एक पत्थर से लगा और एक तरफ हट गया। इतने में पीछे से आता घोड़ा उससे जोर से टकराया। उस टकराने के कारण वह सैनिक, जिसने हाथ में बाण लिया हुआ था, जोर से चिल्लाता नीचे गिर गया। उसे जिन्दा कुचलते हुए बाकी घोड़े आगे दौड़े।

सुबाहू, इतना खुश हुआ कि वह घोड़े पर सीधा तनकर बैठ गया। उसने सोचा कि इस घटना के बाद



आश्विक उनका पीछा करना छोड़ देंगे और अपने साथी की मदद करेंगे। परन्तु उसका अनुमान झूठ निकला। शत्रु सैनिकों ने अपने साथी के लिए पीछे मुड़कर भी न देखा। वे और तेज़ी से घोड़े भगाने लगे। यह देखकर कि उनमें किसी के पास बाण न थे, सुबाहू बड़ा खुश हुआ। उसमें नया जोश आ गया।

"युवराज! जो शत्रु घुड़सवारों में बाण चलानेवाला था, वह अपने साथियों के घोड़ों द्वारा कुचल कर मार दिया गया है। अब हमारे पीछे तीन दुश्मन ही आ रहे हैं। उनके पास केवल तलवार ही हैं।



क्या रुककर उनको हम यमपुरी पहुँचा दें?" सुबाहू ने पूछा।

चन्द्रवर्मा ने पीछे मुड़कर देखा, तीन ही शत्रु आश्विक थे। उन तीनों का मुकाबला करना बहुत कठिन न था। परन्तु इस बीच और शत्रु वहाँ आ गये, तो उनकी हालत और भी बिगड़ जायेगी। यह सोचते हुए उसने अपना घोड़ा थोड़ा धीमे कर दिया और रास्ते के एक तरफ उसे रोक दिया। इतने में सुबाहू वहाँ आया और उसने अपना घोड़ा रोक दिया। उसके बाद शत्रु सैनिक आये। वे भी अपने घोड़े रोककर आपस में धीमे धीमे बातें करने लगे।

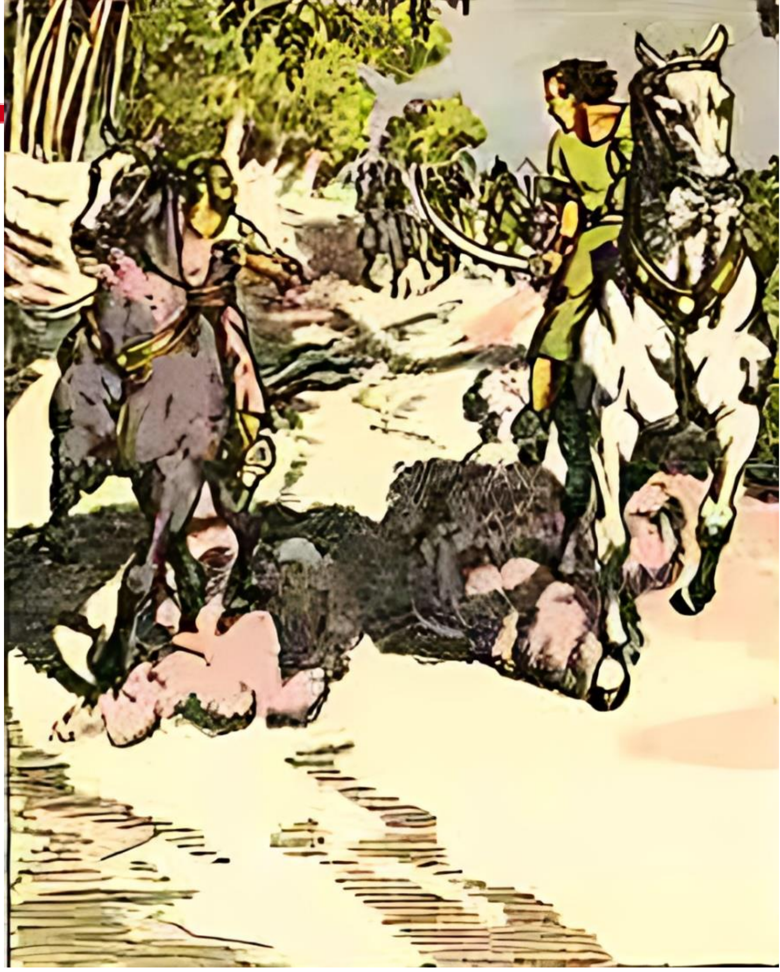
"युवराज! लगता है ये दुष्ट हम से मुकाबला करने के लिए कुछ हिचक रहे हैं। वे हिम्मत करके आगे न आयेंगे। हम ही उन पर हमला करें।" सुबाहू ने चन्द्रवर्मा से कहा।

चन्द्रवर्मा ने शत्रु आश्विकों की ओर देखा, और कहा-"अच्छा सुबाहू! आओ, हम इन्हें यम के पास भेजेंगे। अगर देरी की तो और शत्रु सैनिक यहाँ इनकी मदद करने आ जायेंगे।" उसने अपने घोड़े को शत्रु आश्विकों की ओर बढ़ाया।

चन्द्रवर्मा और सुबाहू को अपनी ओर आता देख तीनों शत्रु आश्विकों ने अपने घोड़े तुरन्त पीछे हटाये। वे नगर की ओर तेजी से भागने लगे। चन्द्रवर्मा ने घोड़े को ऐंड लगाई, उसे आगे बढ़ाया। परन्तु शत्रु अधिक भी अपने घोड़ों को मार मार कर आगे भगाने लगे। रास्ते में धूल उड़ने लगी।

शत्रुओं का पीछा करते करते चन्द्रवर्मा और सुबाहू करीब करीब दो मील नगर

की ओर गये। उन्हें यकायक नगर की ओर से आते हुए कुछ घुड़सवार दिखाई दिये। चन्द्रवर्मा ने उन्हें देखते ही अपना घोड़ा मोड़ा। उसे पीछे दौड़ाते हुए कहा-"सुबाहू! अब तो तुम्हें शत्रुओं की चाल समझ में आ गई होगी। अब हमारे भाग जाने में ही भला है। इससे पहले कि हम इन तीनों को पकड़ सकेंगे सारी की सारी शत्रुओं की पलटन हमें घेर लेगी। हमारा काम तमाम कर देगी।"



ज्योंही चन्द्रवर्मा और सुबाहू ने अपने घोड़ों को पीछे भगाया, त्योंही वे तीनों शत्रु घुड़सवार उनका पीछा करने लगे। धीमे धीमे, शत्रु आधिकों और चन्द्रवर्मा और सुबाहू में फासला कम होता जाता था। वे पास आ रहे थे।

"युवराज! इस बार हम सचमुच बड़े खतरे में पड़ गए हैं।" सुबाहू ने हाँफते हाँफते कहा।

चन्द्रवर्मा ने कोई जवाब नहीं दिया। अपने पीछे आने के लिए उसने सुबाहू की ओर हाथ हिलाकर सङ्केत किया। जो उनका पीछा कर रहे थे, उनको न मालूम था कि वे किस रास्ते पर आ रहे थे। देखते देखते, वे भी रास्ते के दोनों तरफ की झाड़ियों को चीरते हुए पहाड़ पर चढ़ने लगे, क्योंकि चन्द्रवर्मा और सुबाहू वहाँ चढ़ रहे थे।

चन्द्रवर्मा और सुबाहू के घोड़े खूब थक गये थे। चन्द्रवर्मा जानता था कि वे उन्हें बहुत दूर न ले जा सकेंगे। उसकी नजर शत्रु आश्विकों की ओर पड़ी, उनके घोड़े भी हाँफ रहे थे। उनके मुखों से भी झाग निकल रही थी। उसकी दृष्टि पहाड़ की तराई पर गई। कुछ दूरी पर

जहाँ से बाण आ सकता था, दस बारह शत्रु सैनिक उनका पीछा करते चले आ रहे थे।

"सुबाहू....... अब हमारा, इन घोड़ों पर भरोसा करके जाना अच्छा नहीं है। ये कभी भी मर सकते हैं। वे बेहद थक गये हैं। पैदल जाने में ही हमारा भला है।" कहता कहता चन्द्रवर्मा घोड़े पर से उतरा। उसी समय शत्रु सैनिक....घोड़ों से उतरकर .... चन्द्रवर्मा और सुबाहू की ओर जोर से भागे।

चन्द्रवर्मा ने चारों ओर देखा। पहाड़ में एक ढलान की जगह देखकर वहाँ जाकर, पत्थर.... पेड़ों को पकड़ता पकड़ता वह नीचे उतरने लगा। सुबाहू भी उसके पीछे उसी तरह चला। वे दोनों उतरते जा रहे थे .... कि दस बारह शत्रु सैनिक उस ढलान के पास आये। आखों पर हाथ रखकर वे ध्यान से देखने लगे।

उन में से एक जोर से बोला-"हमारा उनका पीछा करते जाना खतरनाक है। अगर कहीं हाथ की या पैर की पकड़ ढीली हो गई तो कहीं दूर जा गिरेंगे, यहीं खड़े होकर उन पर पत्थर लुढ़काओ।" तुरन्त वे बड़े बड़े पत्थर, चन्द्रवर्मा और सुबाहू की ओर लुढ़काने लगे।

तब तक चन्द्रवर्मा और सुबाहू खड्ड की तह तक पहुँच गये थे। चन्द्रवर्मा ने ऊपर खड़े सैनिकों को एक बार देख कर कहा-"सुबाहू, अब कोई ओर रास्ता नहीं है, तुम्हें तैरना आता है न?" कहकर वह खड्ड के पास वाली नदी में कूद पड़ा और तैरने लगा।

(अभी और है)





मिश्र देश का खलीफा, मोहम्मद इबनतैलून बहुत सज्जन था। उसने गद्दी पर चढ़ते ही पिता के अन्याय को दूर किया और अराजकता को शान्त किया। लोगों को सताकर उसके पिता ने जो धन इकट्ठा किया था, उससे उसने, कवियों और वीरों और फकीरों की सहायता की।

एक बार, खलीफा मोहम्मद ने यह देखा कि उसके किस-किस कर्मचारी की तनख्वाह अधिक थी और काम कम था। और किनके पास काम अधिक था और तनख्वाह कम थी। फिर उसने जिनके पास काम कम था, उनको काम अधिक और जिनकी तनख्वाह कम थीं, उनको अधिक करने की आज्ञा दी। और सबका मामला तो ठीक तय हो गया; पर एक बूढ़ा बाकी रह गया।

"बाबा, तुम क्या काम करते हो? तुम्हारी तनख्वाह कितनी है?" खलीफा ने पूछा।

"आपके स्वर्गीय पिता ने मुझे एक पेटी देकर, उसकी रखवाली करने के लिए कहा। इससे अधिक मेरा कुछ और काम नहीं है। इसके लिए मुझे हर महीने दस दीनार दी जाती हैं।" बूढ़े ने कहा।

"इतने कम काम के लिए इतनी बड़ी तनख्वाह! उस पेटी में क्या है?" खलीफा ने पूछा।

"मैं उसको चालीस साल से हिफाजत से रखे हुए हूँ। पर उसमें क्या है, यह मैं अब तक नहीं जानता।" बूढ़े ने कहा।

खलीफा ने उस पेटी को मँगवाकर देखा। वह सोने की पेटी थी। उसको



खोला। उसमें से, कोई लाल चूर्ण, एक रवाल निकली जिसपर कुछ लिखा हुआ था। परन्तु वह किस भाषा में था, उसका क्या अर्थ था यह दरबार में एक भी न जान सका। उसके बारे में पूछताछ करने पर मालूम हुआ कि वह पेटी किसी हसन अब्दुल्ला की थी और खलीफा के पिता ने उसे कैद में डलवाया था।

खलीफा ने आज्ञा दी कि यदि हसन अब्दुल्ला जीवित हो तो उसे कैद से छुड़वाकर उसके सामने हाजिर किया जाय। वह चालीस वर्ष की कैद भुगत चुका था। बूढ़ा हो चुका था। उसे खलीफा के सामने लाया गया। खलीफा ने पेटी उसे देते हुए कहा-"सुना है, यह आपकी है। आप इसे ले लीजिये।"

हसन अब्दुला खुशी के आँसू बहाने लगा। उसने कहा-"महाप्रभु! आपके पिता ने जिस पेटी को जबर्दस्ती मुझसे लिया था, उसे मैं इच्छापूर्वक आपको देता हूँ। स्वीकार कीजिए।" खलीफा ने हसन अब्दुल्ला से उस पेटी की कहानी कहने के लिए कहा। हसन अब्दुल्ला ने अपनी कहानी यों सुनाई:

कैरो नगर के सब व्यापारियों में मेरा पिता सबसे अधिक धनी था। मैं उनका इकलौता लड़का हूँ। बड़े बड़े शिक्षकों को नियुक्त करके, उन्होंने मुझे शिक्षित किया। विद्वान बनाया। मेरी एक सुन्दर लड़की से शादी भी की। मैंने उसके साथ दस वर्ष गृहस्थी भी की।

उसके बाद दुनियाँ भर की मुसीबतें एक साथ मेरे सिर पर पड़ीं। मेरा पिता प्लेग से मर गया। हमारे घर जल गये। हमारी नौकायें समुद्र में डूब गई। मैं सब कुछ खो बैठा। भीख माँगकर जीने

की नौबत हम पर आ पड़ी। कई बार तो मुझे, मेरी स्त्री और बच्चों को फाके भी करने पड़े। उस समय मेरी पत्नी ने अपने आखिरी कपड़े मुझे देकर कहा, इन्हें बेचकर बच्चों के लिए रोटी ले आइये।

मैं पत्नी के कपड़े लेकर जा रहा था कि ऊँट पर सवार होकर एक अरब मेरे सामने से आया। मुझे देखते ही उसने ऊँट से उतरकर पूछा-"हसन अब्दुल्ला नाम के बड़े व्यापारी के घर का रास्ता किधर है?"

"महाशय, में नहीं जानता उस नाम का कोई व्यक्ति कैरो शहर में है!" कहकर में चला गया। परन्तु उसने हाथ पकड़कर मुझे रोका, पूछा- "क्या तुम हसन अब्दुला नहीं हो? अल्लाह के भेजे हुए अतिथि को इस तरह टरकाते हो?" फिर उसने मेरा आलिङ्गन किया। वह मेरे साथ मेरे घर आया।

मैं एक बार फिर अपनी पत्नी के कपड़े बेचने जा रहा था कि वह मुझे मिला। मुझे रोककर वह जान गया कि मैं किस काम पर जा रहा था। उसने मेरे हाथ में दस दीनार



रखकर कहा-"जाओ, जो कुछ चाहिए उसे खरीदकर ले जाओ।" वह पन्द्रह दिन हमारे यहाँ अतिथि बनकर रहा और हर रोज मुझे दस दीनारें देता गया। सोलहवें दिन उसने यकायक मुझसे कहा-"क्या तुम मेरे लिए बिकोगे, हसन जितना तुम माँगोगे उतना दूँगा।"

मैंने सोचा कि वह मजाक कर रहा था। "जो एक चोट से मर जाये उसकी कीमत हजार दीनार है। उससे अधिक चोटों से जो मरे, उसकी कीमत पन्द्रह सौ है, यह कुरान में लिखा हुआ है।"



मैंने कहा। वह पन्द्रह सौ दीनार देने के लिए मान गया। तब में जान सका कि वह सच ही कह रहा था। यह सोचकर कि कम से कम मेरे बाल बच्चे, सुखी होंगे, मैं बिकने के लिए मान गया। उसने पन्द्रह सौ दीनार गिनकर देते हुए कहा-"मैंने तुझे सफ़र में साथ देने के लिए ही खरीदा है। तुम पर कोई बिपत्ति न आयेगी।

मैंने वह धन अपने लोगों को दे दिया। उस महाशय के कथनानुसार में एक ऊँट खरीदकर, सफ़र के लिए आवश्यक चीजें लेकर उसके साथ चल दिया। हम जल्दी ही रेगिस्तान के रास्ते दस दिन सफ़र करके ऐसी जगह पहुँचे, जो निर्जन था।ग्यारहवें दिन हम एक मैदान में पहुँचे।

उस मैदान के बीच में एक ऊँचा पत्थर का खम्भा था। उसके ऊपर ताम्बे से बनी एक युवक की मूर्ति थी। उस युवक की दायें हाथ की अंगुलियाँ खुली हुई थीं। पाँचों अंगुलियों में पाँच चाबियाँ लटक रही थीं। उनमें से एक सोने की, एक चान्दी की, एक ताम्बे की एक लोहे की, एक राङ्ग की थी। क्योंकि मैं तब उन चाबियों का रहस्य न जानता था, इसलिए मुझे कष्ट झेलने पड़े।

स्तम्भ के पास पहुँचकर हम ऊँटों पर से उतरे। अरब ने धनुष से बाण ताम्बे की मूर्ति पर छोड़ा। परन्तु बाण उतना ऊँचा न जा सका। उसने मुझे धनुष देकर मूर्ति के हाथ की अंगुलियों पर लटके चाबियों पर मारने के लिए कहा। मैंने जो बाण छोड़ा तो सोने की चाबी नीचे गिरी। मैं उसे मालिक को देने ही वाला था कि उसने उसे मुझे रखने के लिए कहा। मैं यह न जानता था कि उसके

कारण कष्ट आते थे। मैंने उसको कमर में बाँध लिया। फिर मैंने चान्दी की चाबी नीचे गिराई। मालिक ने उसको भी मुझे रखने के लिए कहा। उसके कारण दुख-दर्द आते थे।

फिर मैंने लोहे और राङ्गे की चाबी गिराई। अरब ने मेरे बल और निशाने की तारीफ की। उन दोनों चाबियों को उसने ले लिया। वे सुख और ज्ञान देते थे। मैं बाण लेकर ताम्बे की चाबी गिरानेवाला ही था कि मेरा हाथ खींचकर, उसने कहा- "अरे अभागे! क्या करने जा रहे हो?" उसके बाण खींचने के कारण, वह पैरों पर जा गिरा, मुझे चोट लगी। दर्द होने लगी। वह ही मेरे कष्टों और दुखों का आरम्भ था। ताम्बे की चाबी के कारण मृत्यु आती थी।

मेरे मालिक ने मेरे घाव पर पट्टी बाँधकर मुझे ऊँट पर चढाया। हम तीन दिन के सफ़र के बाद फलों के बागों के इलाके में पहुँचे। मेरा घाव मुझे लगातार दर्द दे रहा था। मैं बहुत प्यासा था। लङ्गड़ाता लङ्गड़ाता पेड़ों के पास गया, एक



फल को तोड़कर दान्तों से काटा। दान्त उस फल में अड़ गये। मैं चिल्ला भी न सका। आँखें बाहर निकल-सी आई। मैं वहीं गिर गया।

मेरा मालिक मेरी बुरी हालत जानते ही पेड़ के नीचे गया। उसने वहाँ पड़े फलो को चुना। उनमें से एक कीड़ेवाला फल लेकर, उसके कीड़े उसने मेरे मुख के फल में रखे। उनको मेरे मुख के फल को खाने में तीन दिन लगे। तब जाकर मैं बच सका। उन तीन दिनों में, जो दर्द मुझे हुआ, उसका बयान करना मुश्किल है। मेरा मेरे मालिक मेरे साथ ही रहा। मेरे साथ



ही उसने भोजन किया। मेरे साथ ही वह सोया।

मेरा मुख ठीक हुआ और जब मैंने कुछ खाकर पानी पीने की सोची तो, हमारा खाना खतम हो गया और पानी की मशक भी खाली हो गई। मैं जोर से रोया। अरव ने जैसे तैसे मुझे सान्त्वना देकर मुझसे सफर करवाया। हम सारा दिन भर सफ़र करके एक पहाड़ के पास पहुँचे। मेरे मालिक ने कहा कि इधर उधर की चीजें खाकर कोई दर्द न मोल ले बैठना। वह ही जाकर कुछ फल तोड़कर लाया। वे स्वादिष्ट थे और पौष्टिक भी।

चन्द्रोदय के समय, मैं कम्बल बिछाकर सोना चाहता था कि अरब ने मुझे एक काम सौंप दिया। "तुम इस पहाड़ पर चढ़ो और उसकी चोटी पर रात बिताओ। सूर्योदय तक पहाड़ की चोटी पर रहो। नमाज पढ़कर नीचे उतरना। भूलकर भी न सोना, समझे? सोने से तुम बीमार पड़ जाओगे।"

मैं तो बिका गुलाम था। उसकी बात कैसे सुने बगैर रहता? इसलिये मैं मरता, जीता, हाँफता, हाँफता, पहाड़ की चोटी पर पहुँचा। मैं थकान के कारण, तुरन्त सो गया। सूर्योदय से कुछ पहिले में उठा। क्या देखता हूँ कि मेरा सारा शरीर फूल गया है। बहुत मुश्किल से मैं उठा। पूर्व की ओर मुड़कर, नमाज करके, में नीचे उतरने के लिए तैयार हुआ। क्योंकि मेरे अङ्ग मेरे आधीन न थे, इसलिये लुढ़कता लुढ़कता, पहाड़ के नीचे गया। जगह जगह घाव हो गये।

मेरे मालिक ने मेरी तरफ देखा भी नहीं। उसने जमीन पर कुछ लकीरें खींची। "तुम्हारी छाया के कारण रहस्य मालूम

हो गया है। आओ, यहाँ खोजें।" मैं जोर से रोने लगा। तब जाकर उसने मेरी तरफ़ देखा। पहाड़ की चोटी पर सो जाने के कारण वह मुझ पर गुस्सा कर रहा था, उसने चाकू लेकर मेरे जोड़ों में जोर से भोङ्का। खून की जगह पानी निकला। मेरा दर्द कम हो गया।

उसने जिस जगह निशान किया था वहाँ खोजने पर एक सङ्गमरमर की समाधि निकली। उसमें मनुष्य की हड्डियाँ और चमड़े पर कुछ लिखा मिला। अरब ने उसको पढ़ा।

"हसन, इसमें हराम नगर का रास्ता है जिसको किसी आदमी ने नहीं देखा है। हमें वहाँ ऐसी सिन्दू गन्धक मिलेगी जो किसी लोहे को भी सोना बना देगी।"

हम पहाड़ का चक्कर लगाकर तीन दिन यात्रा करके, सामों की घाटी पहुँचे। वहाँ जहाँ नजर जाती थी वहाँ काले काले अजगर लटक रहे थे। मेरे मालिक ने मुझे धनुष बाण देकर कहा-"सीङ्गवाले साँप को देखकर मार देना। उसका सिर और दिल लाना।" मैं प्राणों की



आशा छोड़कर उस घाटी में गया। थोड़ी देर में मुझे सीङ्गोवाला साँप दिखाई दिया। सौभाग्य से मैं उसको मार सका, उसका सिर और दिल निकालकर ला सका।

मेरे मालिक ने मुझ से आग तैयार करवाई। उस पर एक कढ़ाई रखकर उसने, साँप का सिर और दिल गरम किया। उसमें उसने तेजाब की-सी कोई चीज़ दो बून्द डाली। फिर उसने कुछ मन्त्र पढ़े। फिर उसने कढ़ाई में तली चीज़ को, अपने कन्धों पर रगड़ने के लिए कहा। मेरे रगड़ने की देर थी कि वहाँ उसके पंख उग

जाये। उसने मेरे भी पंख उगाये। वह मुझे लेकर आकाश में उड़ा।

उड़ते उड़ते हम हराम नगर पहुँचे। उस निर्जन वन में, जो श्री सम्पदा देखी उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। पर हम वहाँ से लाये केवल 'कीमिया' नाम की सिन्दू गन्धक ही। मुझे 'कीमिया' में विश्वास न था। इसलिये रत्न, मोती वगैरह, बटोरने लगा। परन्तु मेरे मालिक को गुस्सा आ गया और उसने उन्हें दूर फेंक दिया।

फिर हम जैसे तैसे कैरो पहुँचे। न जाने क्यों सारे कष्ट मेरे सिर पर ही आये। मैं पहले अपने घर की ओर भागा। परन्तु वहाँ कोई न था। जिनको मैं अपना कह सकता था, सब मर मरा गये थे। यह जानकर में बहुत दुखी हुआ। मेरा मालिक मुझे ढाढ़स बँधाकर एक और मकान में ले गया। वह नील नदी के किनारे था। हमने 'कीमिया' के द्वारा बहुत सोना बनाया। हमें किसी चीज की कमी न थी। थोड़े दिनों बाद मेरा मालिक मर गया। वह अपना सब कुछ मुझे देता गया।

मेरे पास की सोने और चान्दी की, चाबियों के कारण ही मुझे इतनी मुसीबतें झेलनी पड़ी थीं, यह जानकर मैं उनको पिघला रहा था कि आपके पिता के सैनिकों ने आकर मुझे पकड़ लिया। आपके पिता ने सोना बनाने का भेद बताने के लिए कहा। मैंने नहीं बताया। आपको बताये देता हूँ। वह लाल चूर्ण ही वह भेद है। आप इसका उपयोग न कीजिये।

यह कहानी सुनकर, खलीफा मोहम्मद बहुत खुश हुआ। उसने हसन अब्दुल्ला को अपना विश्वासपात्र मित्र बनाया।



जिम्मेवारियाँ

एक मटका, मुट्ठी भर मिट्टी, सरसों का डण्ठल, मक्खी, सूई ने मिलकर अपना घरबार बसाना चाहा। उन्होंने घर का काम आपस में यों बाँट लिया-"मिट्टी पानी लायेगी, सरसों का डण्ठल गौ चरायेगी, सूई घर में झाडू देगी, मक्खी बैल की रखवाली करेगी, मटका घर का मुखिया होगा।"

सब अपने अपने काम पर निकले। मिट्टी पानी लेने जो गई कि पानी में ही मिल गई।

गौ को भूख लगी, उसने, हाँकने वाले सरसों के डण्ठल को निगल लिया। बैल ने गोबर किया तो उसकी रखवाली मक्खी उसमें फँस गई।

सूई, झाड़ ढूँढ़ने गई, और चीटियों के खोल में जा गिरी।

मटका यह देखने के लिए कि औरों का क्या हुआ, दीवार से कूदा और टुकड़े टुकड़े हो गया।





धवलगिरी का राजा यशोधन आदर्श राजा था। प्रजा को सुख रखने के लिए वह निरन्तर प्रयत्न करता रहता। वह एक दिन, वेष बदलकर, अपनी राजधानी में घूम रहा था कि उसे एक झोंपड़ी में तीन बहनें आपस में बातचीत करती दिखाई दी।

तीनों में बड़ी ने कहा-"मैं राजा के लिए मिठाइयाँ वगैरह, बनानेवाले से शादी करना चाहती हूँ। राजा जो कुछ खाकर छोड़ देंगे, वह हम खा सकेंगी।"

"मिठाइयाँ वगैरह से कहीं पेट भरता है! मैं राजा के रसोइये से शादी करना चाहती हूँ।" दूसरी बहन ने कहा।

तीसरी ने कुछ न कहा। परन्तु उसकी बहनों ने उससे पूछा-"तुम किससे शादी करना चाहती हो? आखिर उसने कहा-"मैं राजा से ही शादी करना चाहती हूँ। रत्न जैसी सन्तान चाहती हूँ।"

यह सुन राजा ने उन तीनों की इच्छायें पूरी करने की सोची। उसने अगले दिन तीनों बहनों को बुलवाया। एक ही मुहूर्त में तीनों की शादियों हो गई। परन्तु तीसरे की शादी क्योंकि राजा से होनी थी इसलिए उनका विवाह बड़े वैभव के साथ हुआ।

रानी बनने पर भी वह अपनी बहनों को बड़े आदर के साथ देखती। उनको कोई कमी न होने देती। परन्तु बड़ी बहनें, छोटी बहन का वैभव न देख सकीं। वे ईर्ष्या से जलने लगी।

यशोधन महाराजा अपनी पत्नी को बड़े प्रेम से देखता। वह उच्च कुल में न

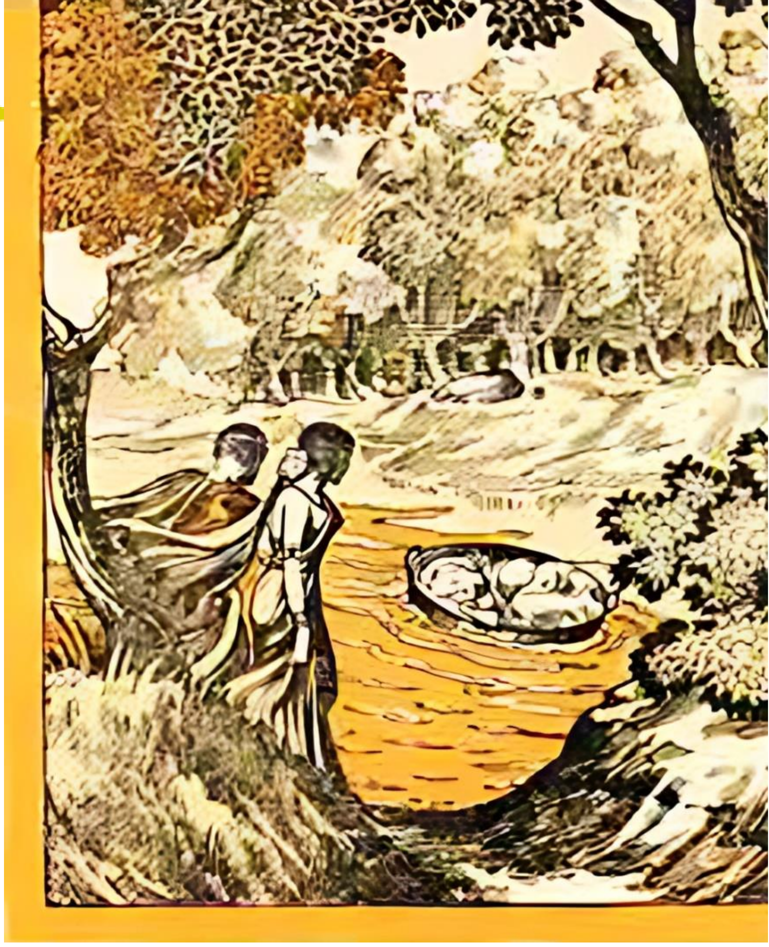
पैदा हुई थी। फिर भी वह बड़ी उदार थी। वह उनके अनुरूप पत्नी थी।

रानी गर्भवती हुई। प्रसव के दिन आये। प्रसव के लिए उसकी बहने आई। रानी के एक सुन्दर लड़का पैदा हुआ। यह देख उनको और भी ईर्ष्या हुई। उन्होंने एक गमले में लड़के को रखकर, राजमहल के पासवाले नहर में छोड़ दिया और एक पिल्ले को लाकर रानी के पलङ्ग पर रख दिया।

जब राजा को मालूम हुआ कि उसकी पत्नी ने एक पिल्ले को जन्म दिया है तो उसका कलेजा थम-सा गया। परन्तु उसको पत्नी पर गुस्सा न आया।

रानी की बहनों ने जो लड़का गमले में रखा था, वह राजा के माली को मिला। उसके कोई सन्तान नहीं थी। उसने उस लड़के का नाम 'सुजात' रखा। वह उसे प्रेम से पालने पोसने लगा।

अगले साल रानी ने एक और लड़के को जन्म दिया। इस बार भी उसकी बहिनों ने उसके पलङ्ग पर एक बिल्ली रखी और उस लड़के



को भी नहर में छोड़ दिया। वह भी राजा के माली को मिला। उसने उसका नाम सुकेतु रखा। वह उसे भी प्रेम से पालने पोसने लगा।

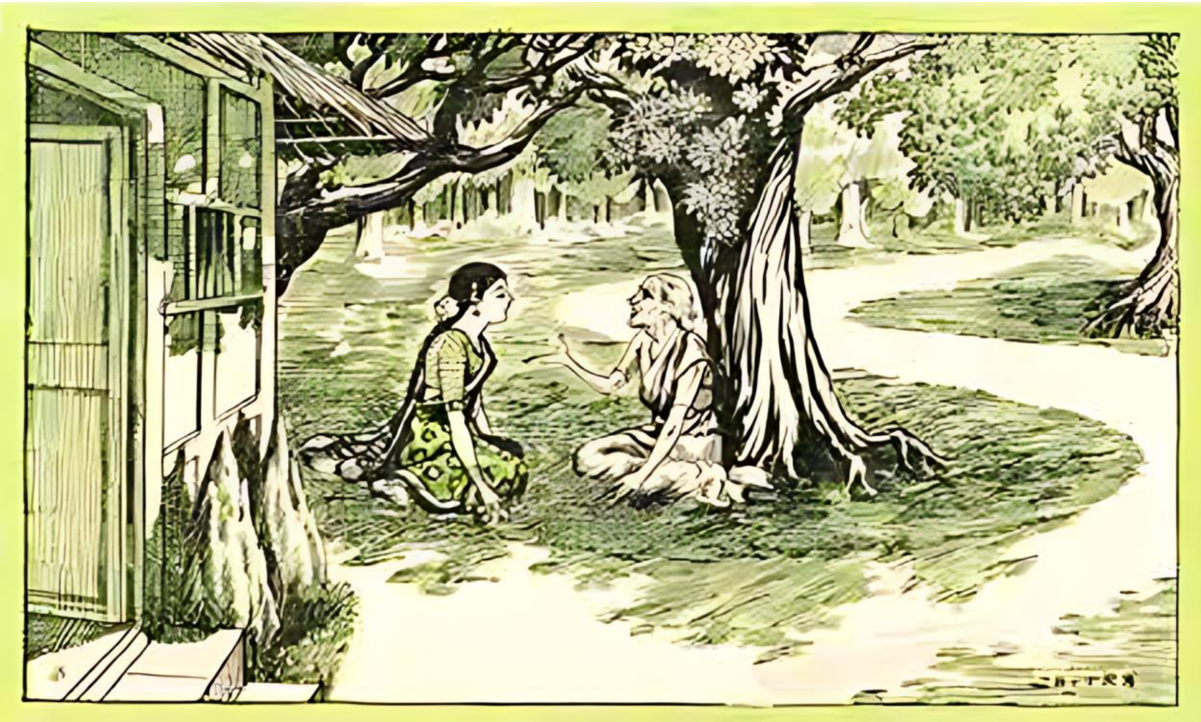
यह देख कि रानी दो बार गर्भवती हुई और दोनों बार उसने जन्तुओं को जन्म दिया, राजा को बहुत दुख हुआ। पर चूँकि रानी पर उसको बहुत प्रेम था, इसलिए उसने उसको माफ कर दिया।

तीसरी बार रानी ने लड़की को जन्म दिया। इस बार उसकी बहनों ने उसके पलङ्ग पर चूहा रखकर, उस लड़की को भी नहर में छोड़ दिया। वह लड़की भी माली को मिली। वह लड़की बहुत सुन्दर

थी। उसका मुँह विकसित पुष्प के समान था। जब वह हँसती तो मोती टपकते। माली ने उसका नाम सुहासिनी रखा। तीनों बच्चे अभी छोटे ही थे कि माली की पत्नी मर गई। उसने राजा के यहाँ नौकरी छोड़ दी। राजा ने जो कुछ धन दिया था, उससे उसने नगर के बाहर एक सुन्दर उद्यान बनाया। उसमें उसने एक बड़ी कुटिया बनायी। अपने बच्चों को देखता भालता वह बहुत दिनों तक आनन्दपूर्वक जीवित रहा। माली ने मरते समय सुजात और सुकेतु से कहा कि वे सुहासिनी की अपने प्राण के समान रक्षा करें।

भाई तो कभी कभी शिकार के लिए बाहर जाते, पर सुहासिनी कभी उद्यान से बाहर न गई। एक दिन, एक बुढ़िया ने आकर उससे कहा-"कितना सुन्दर बाग है। इन पेड़ों की साया बड़ी ठण्डी है। क्यों बेटी, कुछ देर यहाँ बैठने दोगी?"

सुहासिनी उस बुढ़िया के साथ पेड़ की साया में बैठ गई। उसने उससे पूछा-"क्यों नानी, इस बाग में तुम्हें कोई कमी दिखाई देती है?"



"बातें करनेवाला पक्षी, गानेवाला पेड़, "जीवजल" अगर हों तो इस तरह का बाग संसार में कहीं और न मिलेगा।" बुढ़िया ने कहा। सुहासिनी ने, कुछ भी हो, ये चीजें लाने की सोची। "वे कहाँ मिलेंगी?" उसने बुढ़िया से पूछा।

"पूर्व की ओर बीस दिन घोड़े पर सवारी करके जाओ। बीसवें दिन जो पहले पहल आदमी दिखाई दे, वह बतायेगा कि वे कहाँ हैं। परन्तु बेटी, उनको लाना आसान नहीं है।" बुढ़िया ने अपने रास्ते पर जाते हुए कहा।

भाइयों के घर आते ही उसने उनसे बुढ़िया की बात कही। सब सुनने के बाद सुजात ने कहा-"मैं कल ही उनके लिए निकल पड़ूँगा।"

वह अगले दिन ही अपने घोड़े पर सवार होकर पूर्व की ओर चल पड़ा। वह बीस दिन सफर करने के बाद एक पहाड़ के पास पहुँचा, जो घने जङ्गल में था। पहाड़ की तराई में, पेड़ के नीचे, उसे कपिल महामुनि तपस्या करता हुआ दिखाई दिया।

क्योंकि वह ही पहले पहल उसे दिखाई दिया था, इसलिए सुजात ने उससे पूछा-





चालीस दिन बाद भी जब भाई वापस न आया तो सुकेतु निकला। सुहासिनी ने उसे न जाने के लिए बहुत समझाया, पर उसने न सुनी। वह भी, भाई की तरह कपिल के पास गया। उसके मना करने पर वह भी पहाड़ पर चढ़ा। किसी का चिल्लाना सुन वह भी मुड़ा और वह भी पत्थर हो गया।

जब सुहासिनी को यह पता लगा कि भाई वापस न आयेंगे तो उसका हृदय पथरा सा गया। कम से कम उनको लिवा लाने के लिए वह घोड़े पर सवार हो उस जगह पहुँची, जहाँ कपिल मुनि थे। उसने कपिल मुनि से पूछा-"मुनीश्वर! क्या मेरे भाई इस तरफ आये थे?"

"आये थे, वे अब पत्थर हो गये हैं।" कपिल ने कहा।

"स्वामी, उन्हें कैसे जिन्दा किया जाय? उनके सिवाय मेरा और कोई नहीं है।" सुहासिनी ने कहा।

अगर उस पहाड़ पर चढ़कर बात करनेवाला पक्षी, गाने वाला वृक्ष, "जीवजल"

"मुनीश्वर! बात करनेवाला पक्षी, गानेवाला वृक्ष और "जीवजल" कहाँ मिलेंगे? क्या कृपया बता सकेंगे?"

"वे इस पहाड़ की चोटी पर हैं। पर जो कोई उन्हें लेने गये हैं, वापस नहीं आये हैं, बेटा।" कपिल ने कहा। सुजात डरा नहीं। वह पहाड़ पर चढ़ने लगा। उसे रास्ते में काले पत्थर की मनुष्यों की मूर्तियों दिखाई दीं। वह जान गया कि वे मूर्तियाँ नहीं थीं, पर मनुष्यों के प्रस्तर रूप थे। थोड़ी दूर जाने पर उसे लगा, जैसे उसे कोई डरा धमका रहा हो।

उसने इधर उधर देखा। तुरन्त वह भी एक पत्थर हो गया।

tुम ला सकीं, तो तुम अपने भाइयों को जिला सकोगी। क्योंकि तुम उनके लिए न जाकर अपने भाइयों के लिए जा रही हो, इसलिए तुम्हारी विजय होगी।" कपिल ने कहा।



जब वह पहाड़ पर चढ़ रही थी तो उसे भी चिल्लाना वगैरह सुनाई दिया। परन्तु वह ड़री नहीं। वह पहाड़ की चोटी पर पहुँच गई। वहाँ उसने एक पिञ्जरे में एक पक्षी देखा। वही चात करनेवाला पक्षी था।

उस पक्षी ने उसको गानेवाला वृक्ष और वह ताल दिखाया, जहाँ "जीव जल" था। पक्षी की सलाह पर वह गानेवाले वृक्ष की एक टहनी, "जीव जल" लेकर, पक्षी के साथ वापस चली। वह रास्ते में हर पत्थर पर एक एक बूँद "जीव जल" छिड़कती आई। पत्थर सब राजकुमार बन गये। उनमें उसके भाई भी थे।

तीनों मिलकर अपने बाग में वापस आये। बाग में बात करनेवाले पक्षी के आते ही, जाने कहाँ कहाँ से, गानेवाले पक्षी आकर बाग में घोंसला बनाकर रहने लगे और साल भर गाते रहे। गानेवाले वृक्ष की टहनी को गाड़ते ही उसमें पत्ते निकले और वे गाने लगे। उसका गाना सुनने के लिए भीनी भीनी हवा चलने लगी। "जीव जल" का एक बून्द डालते ही, बाग की सब पानी की नालियों में कल कल करता पानी साल-भर बहता रहा।

सुहासिनी के बाग के बारे में सब आश्चर्य करने लगे। राजा के पास भी यह खबर पहुँची। जब उसको मालूम हुआ कि उसकी पत्नी ने तीसरी बार भी जन्तु

को जन्म दिया है तो उसको उसने जेल में डालवा दिया था। उसके बाद वह न जान सका कि सुख किसको कहते हैं। यह सोचकर कि उस बाग में बैठने से उसका मन कुछ हल्का होगा, वह वहाँ गया।

उस समय सुहासिनी अकेली वहाँ बैठी थी। यह जानकर कि राजा उसके अतिथि होकर आये हैं, वह घबरा गई। उसने बात करनेवाले पक्षी के पास जाकर पूछा-"पक्षी पक्षी, राजा के लिए क्या क्या पकवान बनवाये जायें?"

"तुम मोतियों से मठरियाँ उन्हें भरी दो।" पक्षी ने कहा। सुहासिनी ने वैसी मठरियाँ राजा को परोसी। राजा ने एक मठरी को तोड़कर कहा-"यह क्या? इसमें मोतियाँ हैं। इस तरह के पकवान मैंने कहीं नहीं देखे हैं।"

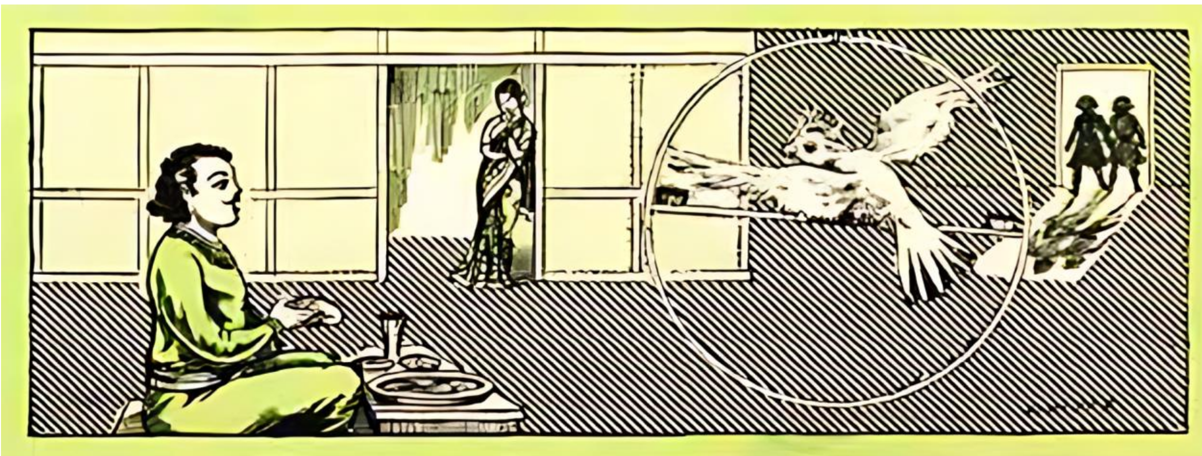
"रानी के गर्भ से कुत्ते, बिल्लियाँ, या चूहों का पैदा होना कहीं देखा है?" बात करनेवाले पक्षी ने पूछा।

राजा का माथा ठनका। "मेरी पत्नी ने बच्चों को ही जन्म दिया था? वे कहाँ हैं ?" उसने पक्षी से पूछा। ठीक उसी समय सुजात और सुकेतु शिकार से वापिस आयें।

"ये हैं तुम्हारे बच्चे।" बात करनेवाले पक्षी ने कहा।

राजा की आँखों से आनन्दाश्रु बहने लगे। वह अपने बच्चों को गले लगाकर घर ले गया। उसने पत्नी को कैद से छुड़वाया उससे माफी माँगी। रानी ने अपनी बहनों को भी क्षमा कर दिया यद्यपि उन्होंने अक्षम्य अपराध किया था।

उसके बाद, अपने बाल-बच्चों के साथ यशोधन और उनकी पत्नी ने सुख से जीवन व्यतीत किया।





जुड़वें बच्चे

काञ्चन नगर में धनपाल नाम का एक व्यापारी रहा करता था। वह व्यापार के लिए स्वर्ण द्वीप जाता साथ अपनी पत्नी को भी ले गया। उन्हें वहाँ एक साल रहना पड़ा। उस समय धनपाल की पत्नी ने जुड़वे बच्चों को जन्म दिया। वे दोनों लड़के थे और बिलकुल एक जैसे थे। धनपाल ने अपने दोनों लड़कों का नाम माधव रखा। एक का नाम बड़ा माधव और दूसरे का छोटा माधव।

बात ऐसी हुई कि जिस दिन धनपाल की पत्नी ने जुड़वे बच्चों को जन्म दिया था, पास में एक गरीब की स्त्री ने भी जुड़वें बच्चों को जन्म दिया। वे दोनों भी लड़के थे। और दोनों बिल्कुल एक जैसे थे।

उनके गरीब पिता ने धनपाल से कहा-"बाबू, हम अपना पेट ही मुश्किल से पाल रहे हैं। मैं इन बच्चों को नहीं पाल सकता। आप अपने बच्चों के साथ इन्हें भी पालिये पोसिये। वे आपके बच्चों की नौकरी करके जिन्दगी गुजार लेंगे।" धनपाल ने उस गरीब को थोड़ा धन दिया। उसके बच्चों का भी पालन-पोषण किया। दोनों का उसने राम नाम रखा । एक का नाम बड़ा राम, दूसरे का छोटा राम।

इन बच्चों के पैदा होने के कुछ दिनों बाद धनपाल, एक नौका में अपनी पत्नी, दोनों माधवों और दोनों रामों को चढ़ाकर काञ्चन नगर के लिए रवाना हुआ। परन्तु समुद्र में तूफान चलने लगा। नौका रास्ता भटक गई। एक पहाड़ी तीर पर जा टकराई और टुकड़े टुकड़े हो गई। इस घटना के कारण धनपाल, बड़ा माधव और बड़ा राम, धनपाल की पत्नी छोटे माधव

योगेन्द्र



और छोटे राम से अलग हो गये। तीन तीन की दो टोलियाँ बन गईं। समुद्र के किनारे रहनेवाले मछुओं ने धनपाल की पत्नी, और उसके साथ के बच्चों की रक्षा की, और उनको रुद्रपुर नगर पहुँचा दिया। धनपाल को एक तमेड़ मिल गई। वह दोनों लड़कों की रक्षा करता एक किनारे पर लगा। वहाँ से काञ्चन नगर पहुँच गया।

अट्ठारह वर्ष बीत गये। इस बीच छोटा माधव, रुद्रपुर के राजा के यहाँ नौकरी करने लगा। युद्धों में उसने पराक्रम दिखाकर खूब कीर्ति पाई। उसने मञ्जरी नाम की लड़की से शादी भी कर ली। उसके नौकर, छोटे राम ने गङ्गा नाम की लड़की से शादी कर ली। वह भी मालिक के साथ ही रहता था। गङ्गा रसोई और घर का काम देखती। मञ्जरी की सेवा किया करती।

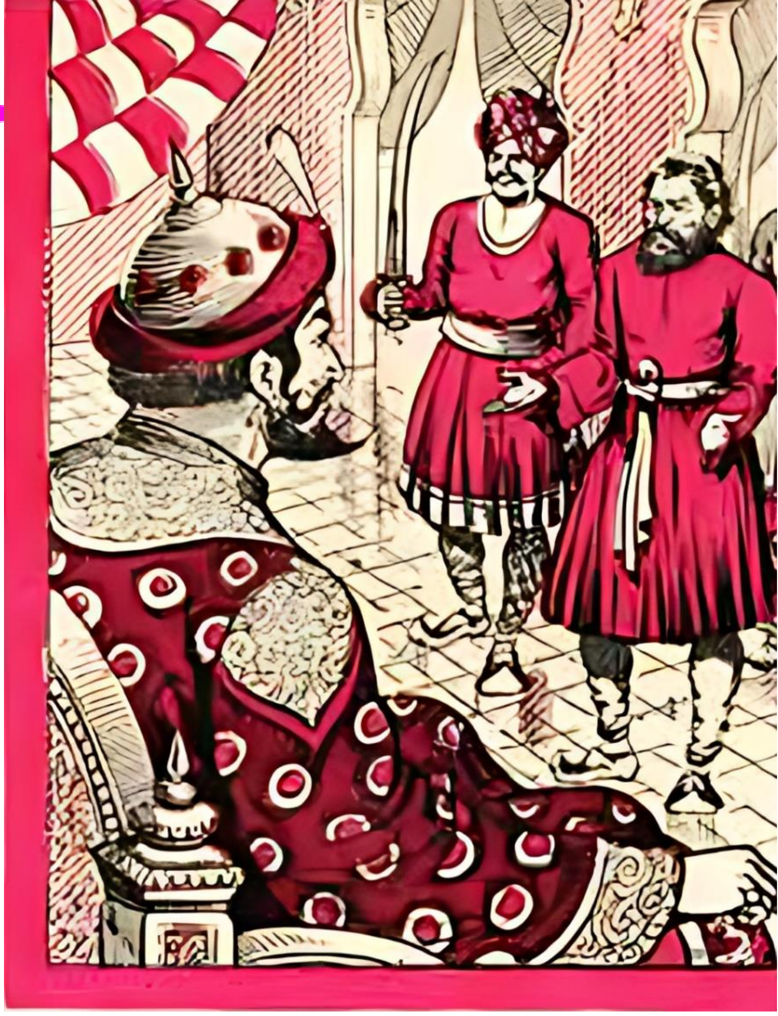
बड़े माधव को जब मालूम हुआ कि उसका एक भाई था, और समुद्र में तूफान आने के कारण वह दूर हो गया था, वह अपने नौकर, बड़े राम को साथ लेकर अपने भाई और माता को ढूँढ़ने के लिए निकल पड़ा। वह जो गया, वापस नहीं आया। पाँच वर्ष बीत गये। धनपाल पुत्र के वियोग से दुखी रहने लगा। वह अपना व्यापार, घर, सम्पत्ति छोड़कर, लड़के को ढूँढ़ता देश विदेश घूमने लगा।

घर छोड़ने के दो साल बाद धनपाल रुद्रपुर पहुँचा। उसके उस शहर में पैर रखते ही, राज सैनिकों ने उससे पूछतलब की, और जब उन्हें मालूम हुआ कि वह काञ्चन नगर का था, तो वे उसे राजा के पास ले गये। क्योंकि कुछ दिनों से...... रुद्रपुर और काञ्चन नगर में होड़-सी चल पड़ी थी। उन्होंने रुद्रपुर के काञ्चन नगरवासियों को भगा दिया था। कुछ को

जेल में डाल दिया था। ये सब बातें धनपाल नहीं जानता था। उसने कहा कि वह दो साल से अपने बड़े लड़के को खोज रहा था, और वह सात वर्ष से अपने छोटे भाई की खोज कर रहा है।

"कानून के अनुसार तुम्हें जेल भेजना चाहिए।पर चूंकि तुम भलेमानस, बड़े आदमी नजर आते हो.... इसलिए तुम कहीं से लाकर हजार मोहरें हमारे पास धरोहर में रखो। ऐसा करने से, तुम कैद से बच सकोगे।" यह कहकर राजा ने, धनपाल को एक सैनिक के साथ नगर में भेजा।

धनपाल, जिस दिन रुद्रपुर पहुँचा था, उसी दिन, बड़ा माधव, और बड़ा राम भी उस शहर में पहुँचे। पर उन्होंने यह न बताया कि वे काञ्चन नगर के रहनेवाले थे। उनको पहले ही मालूम हो गया था कि ऐसा करने से उन पर बिपत्ति आ पड़ेगी। बड़े माधव को बड़ी दया आई जब उसे यह मालूम हुआ कि काञ्चन नगर से आये हुये किसी बड़े आदमी को राज सैनिकों ने पकड़ लिया था। उसे न मालूम था कि वह उसका पिता ही था। फिर वह उनकी कैसे मदद करता?



उसी शहर में छोटा माधव बड़े ओहदे पर काम कर रहा था। वह आसानी से उसकी सहायता कर सकता था। परन्तु वह न अपने पिता के बारे में, न भाई के बारे में और तो और न माँ के बारे में ही कुछ जानता था। क्योंकि उसे और उसके नौकर राम को और उसकी माँ को बचाने वाले मछुओं ने धन के लालच में आकर बच्चों को एक सामन्त को बेच दिया था।

उस सामन्त के यहाँ ही छोटा माधव बड़ा हुआ। एक दिन राजा उसको देखकर बड़ा खुश हुआ। और

उसको उसने अपनी सेना में सरदार नियुक्त कर दिया।

बड़ा माधव और बड़ा राम ठहरने की जगह का इन्तजाम करके शहर देखने गये। थोड़ी देर घूमने के बाद बड़े माधव ने नौकर के हाथ में रुपये देखर कहा-"इसे अपने ठहरने की जगह पर दे देना और कहना कि भोजन तैयार रखें। मैं घूम घाम कर भोजन के लिए वापिस आऊँगा।" बड़े राम के जाने के कुछ देर बाद ही बड़े माधव को राम वापस आता दिखाई दिया। परन्तु वह आने वाला छोटा राम था। बड़े माधव को यह न मालूम था।

उसने उससे पूछा-"अरे! अभी वापिस आ गये? मेरे दिये हुये रुपये क्या हुये?" क्योंकि दोनों राम एक ही जैसे थे इसलिए वह उसमें कोई भेद न देख सका।

जो गलती बड़े माधव ने की थी, वहीं गलती छोटे राम ने भी की। उसने उस माधव को देखकर सोचा कि वह उसका मालिक ही था। उसने कहा-"मालकिन आपको भोजन के लिए जल्दी बुला रही हैं। शाक सब्जियाँ सब ठण्डी हो रही हैं।"



"बन्द कर यह मजाक! मजाक करने का भी वक्त होता है। पैसे क्या हुये?" बड़े माधव ने पूछा।

"अरे, अरे, मालिकन ने, चाहे आप कहीं भी हों, कैसे भी हों, बुला लाने के लिए कहा है।" छोटे राम ने कहा।

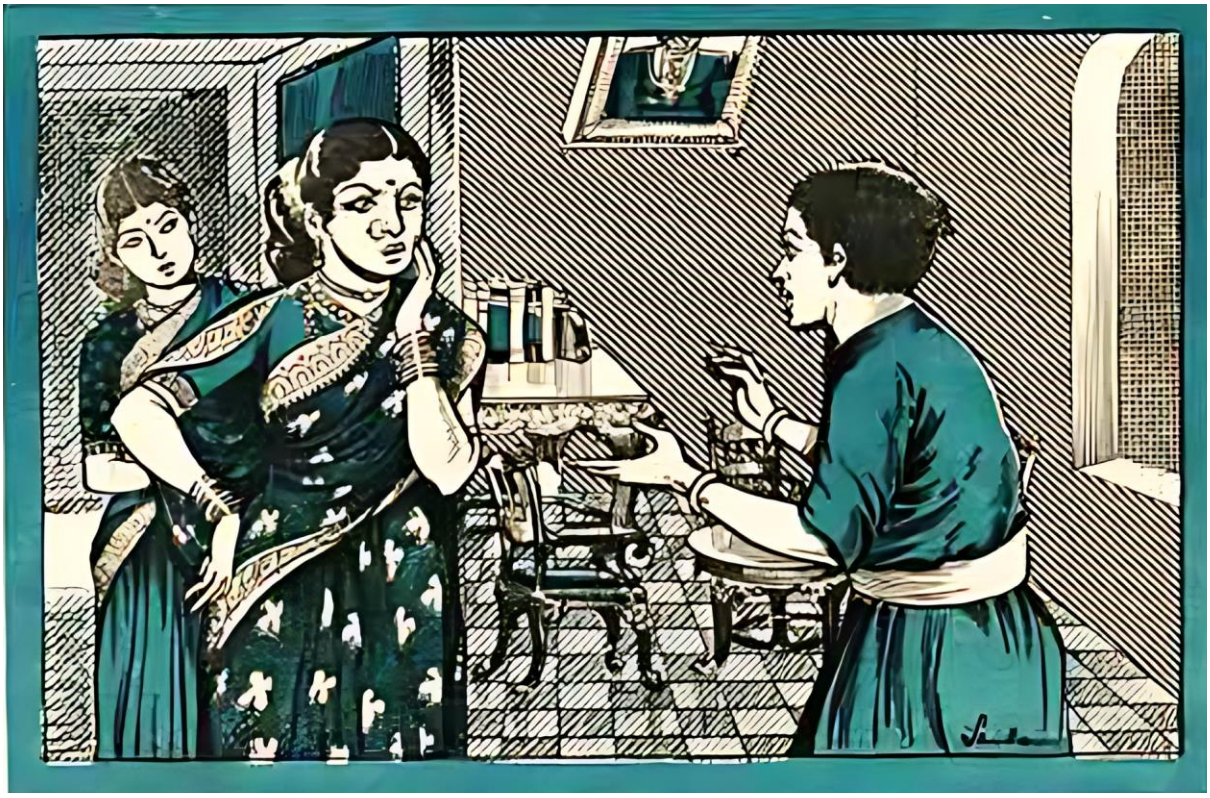
"मालकिन कौन?" बड़े माधव ने पूछा।

"आपकी पत्नी।" छोटे राम ने जवाब दिया।

बड़े माधव की अभी शादी न हुई थी। उसे वह सुनकर गुस्सा आया। "अरे पगले, यह पहले बता कि पैसा क्या हुआ?"

"आप ही मुझसे हँसी मजाक कर रहे हैं। पहले खाना खा लीजिये, उसके बाद मुझे फुरसत से डाँटिए।" छोटे राम ने कहा। बड़े माधव ने उसे खूब पीटा। छोटे राम ने घर भागकर मञ्जरी से कहा-"मालकिन! मैंने मालिक को घर आने के लिए कहा और उन्होंने मुझे खूब धुनकर भेज दिया।"

मञ्जरी यूँ ही बड़ी ईर्ष्यालु स्त्री थी। वह अपने सन्देहों से अपने पति, छोटे माधव से दिन रात झगड़ा मोल लेती रहती। मञ्जरी की मालती नाम की एक बहन थी।





मालती ने बहुत कोशिश की कि उसकी बहन, जीजा को जली कटी न सुनाया करे। पर वह सफल न हुई।

छोटे राम की बात सुनते ही मञ्जरी को अपने पति पर तरह तरह के सन्देह हुये। वह किसी और से प्रेम कर रहा होगा। इसीलिये वह भोजन के लिए घर नहीं आ रहा है। अपने पति से साफ़ साफ़ पूछ ताछ करने के लिए निकल पड़ी।

इस बीच, बड़ा माधव, अपनी ठहरने की जगह पहुँचा। वहाँ उसने देखा कि उसका नौकर, और उसका धन सब सुरक्षित था। वह राम को और डाँटने डपटनेवाला ही था कि इतने में मञ्जरी वहाँ आई। उसे देखकर उसने उसे अपना पति समझा। बड़े माधव से मञ्जरी ने कहा-"आप क्यों यों देख रहे हैं जैसे किसी और को देख रहे हो? जब शादी हुई थी तब बड़े प्रेम से रहा करते थे। वह सब प्रेम अब कहाँ गया?"

"आप मुझ से ही बातें कर रही हैं न?" बड़े माधव ने पूछा। उसने कहा कि उसने उसे पहले कभी न देखा था। उसे रुद्रपुर आये ही दो घण्टे हुये थे। परन्तु मञ्जरी ने उसकी एक न सुनी। "ये ऊँटपटाङ्ग बातें छोड़िये। सीधे मेरे साथ चले आइये।" उसने धमकी दी। माधव करता भी तो क्या करता। वह मञ्जरी के साथ चल पड़ा। वहाँ, मञ्जरी और मालती के साथ उसने भोजन किया। मञ्जरी ने उससे ऐसी बातें की, जैसे वह उसकी पत्नी हो। मालती ने उसे 'जीजा' कह कर पुकारा। माधव को लगा कि वह कोई सपना देख रहा था।

बड़े माधव के साथ आये हुये बड़े राम का भी यह ही अनुभव था क्यों-

कि गङ्गा ने भी उसके प्रति ऐसा व्यवहार किया, जैसे वह उसका पति हो। गङ्गा, बहुत चुड़ैल थी।

जब सब अन्दर भोजन कर रहे थे तो मञ्जरी के असली पति छोटे माधव, और उसके नौकर, छोटे राम ने घर आकर किवाड़ खटखटाये। जब पूछा गया कि वे कौन थे तो उन्होंने कहा-"छोटा माधव और छोटा राम।"

"वे दोनों घर में खाना खा रहे हैं। जाने आप कौन हैं। आप तुरन्त जा सकते हैं।" नौकरों ने जवाब दिया। माधव को जब मालूम हुआ कि उसकी पत्नी किसी को साथ बिठाकर खाना खा रही थी, तो वह गरमा गया।

भोजन समाप्त होते ही, कोई बहाना करके बड़ा माधव और बड़ा राम, बाहर निकले। बड़े माधव को मालती तो पसन्द आई पर उसको मञ्जरी का कर्कश सम्भाषण बिल्कुल पसन्द न आया। बड़े राम को गङ्गा भी बड़ी बुरी लगी। वे थोड़ी दूर गये थे कि एक सुनार सामने आया। उसने बड़े माधव को छोटा माधव समझकर कहा-"माधवजी, मैं आपके लिए ही आ



रहा हूँ। आपने जो हार तैयार करने के लिए कहा था, वह यह है।" उसने उसके हाथ में एक सोने का हार रखा। बड़े माधव को आश्चर्य हुआ। उसने पूछा-"यह क्या है? मुझे इसे क्यों दे रहे हो?"

सुनार ने हँसकर कहा-"इतने में ही भूल गये? आप ही ने तो इसको बनाने के लिए कहा था। रुपये बाद में दे देना।" वह यह कह कर चला गया। बड़े साधव ने बड़े राम की ओर मुड़कर कहा-"राम, इस कम्बख्त शहर

में हमें एक क्षण नहीं रहना चाहिये। तुरन्त ठहरने की जगह जाकर मेरा समान घाट पर पहुँचाओ। नौका लेकर चले जायेंगे।"

हार देने के कुछ देर बाद, कर्ज देने वालों ने, सुनार को पकड़कर, राजसैनिकों को सौंप दिया। उसी समय छोटा माधव वहाँ आया। उसको देखकर सुनार ने कहा-"आप ठीक समय पर भगवान की तरह आये हैं। मैंने जो हार दिया था, यदि उसके पैसे आपने दे दिये, तो मैं इनका कर्ज इन्हें देकर छूट जाऊँगा।"

छोटे माधव ने हैरान होकर पूछा-"तुमने मुझे सोने का हार कब दिया है? बिल्कुल झूठ कहते हो।" सुनार ने हार की कितनी ही निशानियाँ बताई, पर छोटा माधव न माना कि उसने हार लिया था। यह देख सुनार ने राजसैनिकों से कहा-"मेरे पास से गहना

लेकर ये अब मुकरना चाहते हैं। इन्हें भी पकड़िये।"

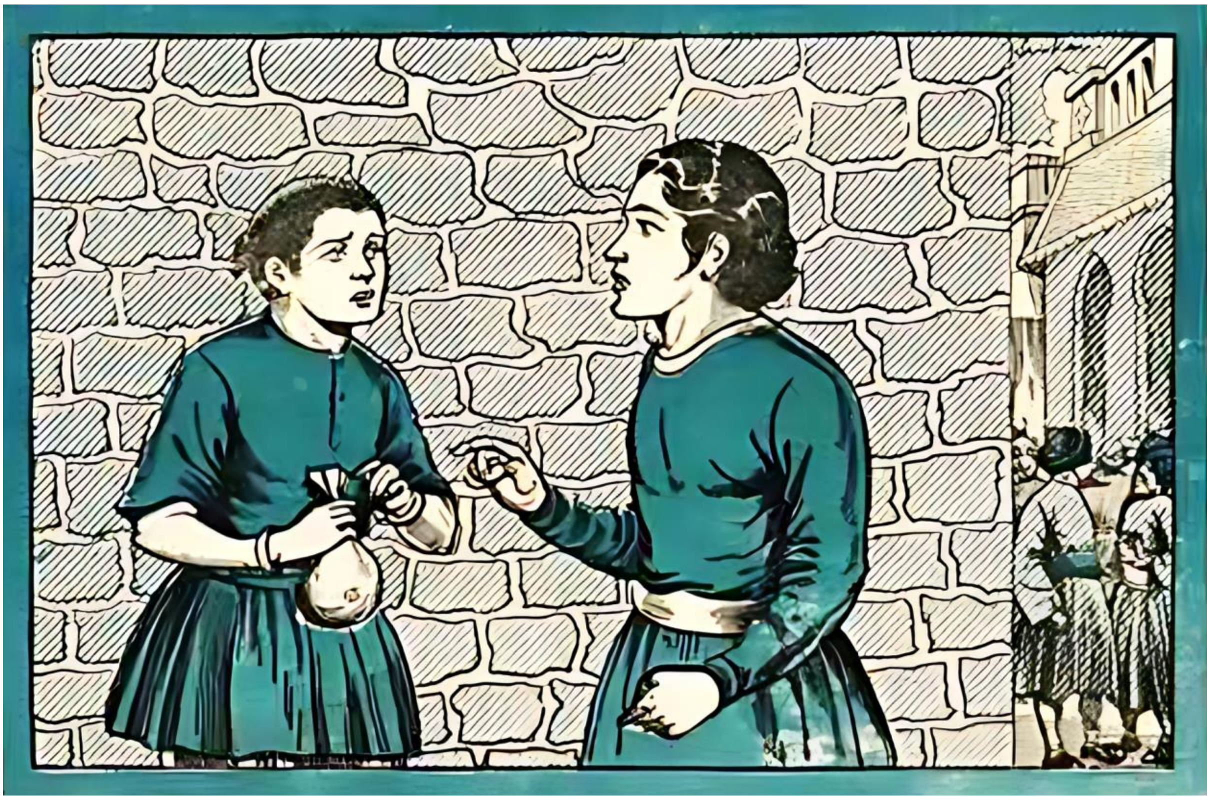
राजसैनिकों ने छोटे साधव को भी पकड़ लिया। वे सुनार, छोटे माधव को पकड़कर जेल ले जा रहे थे कि बड़ा



राम आया। वह अपने मालिक से यह कहने आया था कि समान घाट पर पहुँचा दिया गया था। नाव जाने के लिए तैयार थी। परन्तु छोटे माधव को उसे देखकर यह भ्रम हुआ कि वह उसका नौकर था। "अरे! घर जाकर, मालकिन से पाँच सौ मोहरें लेकर, जल्दी आओ।"

बड़ा राम यह न जानता था कि वह मालिक बड़ा माधव व्यक्ति उसका मालिक न था। वह न जान सका कि क्यों मालिक उसे फिर उस मनहूस घर में जाने के लिए कह रहे थे। वह गुनगुनाता गया-"मालिक जो कहते हैं वह करना ही पड़ता है, क्या जिन्दगी है यह।" वह उस घर में गया, जहाँ उसने भोजन किया था।

उसके कहते कि उसके पति को राजसैनिकों ने पकड़ लिया है, मञ्जरी ने तुरन्त पाँच सौं मोहरें दे दी। वह उन्हें लेकर आ रहा था कि उसको उसका असली मालिक बड़ा माधव दिखाई दिया। बड़े माधव को यह सब सपना-सा लग रहा था। गली में हर कोई उससे बात करता। कई ने कहा कि उनपर उसका कर्ज है। एक कपड़े की दुकानवाले ने





बुलाकर कहा-"आप के लिए ही यह रेशम का थान मँगवाया है।" उसने उसे कुछ थान दिखाये भी। यह देख बड़े माधव को लगा कि उस नगर में लोगों का दिमाग फिरा हुआ है। औरों का तो दिमाग बिगड़ा ही; बड़े राम का भी दिमाग बिगड़ गया था। क्योंकि वह उसे देखते ही चिल्लाया-"क्या राजसैनिकों ने छोड़ दिया है? कर्ज कैसे चुकाया? उसके लिए तो पैसा ला रहा हूँ।" उसने मोहरों की थैली दिखाई। बड़े माधव ने इन प्रश्नों का उत्तर न दिया। उसने आकाश की ओर देखकर कहा-"भगवान रक्षा करो, कम से कम मेरा दिमाग न बिगाड़ो।"

जब पति बहुत देर तक न आया ते मञ्जरी जेल गई। वहाँ उसने रुपये देकर अपने पति को छुड़वाया। छोटे माधव ने उस पर बहुत से आरोप लगाये। उसने कहा कि भोजन के समय उसे उसने अन्दर न आने दिया था। राजसैनिकों से छुड़ाने के लिए तुरन्त पैसा न भेजा था। यह सब सुनकर मञ्जरी को लगा कि उसका पति पागल हो गया था। उसके नौकर राम ने कहा कि जो कुछ मालिक ने कहा था, वह सब ठीक था। इसलिये उसने उन दोनों के हाथ बँधवा कर घर ले जाकर घर के पिछवाड़े के एक काली कोठरी में उन्हें बन्द करवा दिया। और वैद्य के पास खबर भिजवाई।

थोड़ी देर बाद कुछ नौकर मञ्जरी के पास आये-"मालकिन! मालिक और राम, लगता है, छूटकर भाग गये हैं। बगलवाली गली में वे किसी से बातें क रहे हैं।" यह सुनते ही, मञ्जरी कुछ नौकरों को साथ लेकर बगलवाली गली गई। यहाँ बड़ा माधव, बड़ा राम, और

सुनार बातें कर रहे थे। बड़े माधव के गले में सुनार का दिया हुआ हार था। "क्यों बाबू! तुम तो कहते थे कि तुमने हार ही न लिया था? अगर मेरी चीज़ तभी मुझे दे देते तो इतनी मुसीबतें न झेलनी पड़ती।" सुनार कह रहा था।

"मैंने क्या तुम्हें हार देने के लिए कहा था? तुम ही देकर चले गये थे। मैंने कब कहा था कि मैंने हार नहीं लिया है?" बड़ा माधव यह कह रहा था कि मञ्जरी ने वहाँ आकर कहा- "तुम बचकर यहाँ आगये हो? हाथ बाँधकर इनको घर ले जाओ। उस राम को भी।"

यह जानकर कि कोई आफत आनेवाली है, बड़ा माधव और बड़ा राम, पासवाले आश्रम में भाग गये। वह आश्रम एक योगिनी का था। बाहर हलचल सुनकर ने वह योगिनी आई। मञ्जरी ने योगिनी से कहा कि उसके पति की अक्ल बिगड़ गई थी। वह उससे बचकर भागकर आया था। उसने योगिनी से उन्हें सौंपने के लिए कहा।

'क्या तुम्हारे पति की अक्ल किसी और स्त्री को प्रेम करने के कारण



चली गई है? या वह पैसा खो बैठा है? क्या हुआ?" योगिनी ने पूछा।

"किसी और को प्रेम करने के कारण ही खराब हो गई है। मैं शुरू से ही सन्देह कर रही थी।" मञ्जरी ने कहा।

"यह मालुम था तो पति को क्यों नहीं रोका टोका?" योगिनी ने पूछा।

"रोका टोका क्यों नहीं? हमेशा जली कटी सुनाती ही रही। जब तक वे घर में रहते मैं अपने मुँह पर ताला नहीं लगाती। भोजन करते समय भी उन्हें

सुनाती रहती। मगर वह सब बेकार रहा।" मञ्जरी ने कहा।

योगिनी जान गई कि मञ्जरी कैसी स्त्री थी। उसने, बड़े माधव को मञ्जरी को सौंपने से इनकार कर दिया। ये बातें चल रही थीं कि राज सैनिकों के साथ धनपाल वहाँ आया। उस नगर में उसे कोई आदमी न दिखाई पड़ा, जो उसकी मदद करता।

जब वह आश्रम के पास आया, तो काली कोठरी से निकल कर छोटा माधव और छोटा राम वहाँ आये। छोटे माधव को देखते ही धनपाल ने प्रेम से पूछा-"कहो बेटा, छोटे भाई को ढूँढते ढूँढ़ते यहाँ पहुँचे हो? इन राज सैनिकों ने मुझे पकड़ लिया है। पहले हजार मोहरें देकर मुझे छुड़वाओ।"

"मैं नहीं जानता आप कौन हैं।" छोटे माधव ने कहा। कभी उसने अपने पिता को न देखा था। "माधव, क्या मै इतना बदल गया हूँ?" जब धनपाल निशानियाँ बता रहा था, तो आश्रम के अन्दर से बड़ा माधव और बड़ा राम और योगिनी वहाँ आये।

अपने पति के समान दो व्यक्तियों को वहाँ देख मञ्जरी चकित हुई। फिर जो घटनाएँ घटी थीं, वे क्यों घटी थीं, उसे मालूम हो गया। यह पता चला कि योगिनी धनपाल की पत्नी ही थी। वे जुड़वें बच्चे जो छुटपन में ही बिछुड़ गये थे, इतने दिनों बाद मिले। बड़े माधव ने, राजा के यहाँ नौकरी कर ली और मालती से शादी कर ली। उन दोनों को हिल मिल कर रहता देख, मञ्जरी ने भी अपने पति को जली कटी सुनाना छोड़ दिया। धनपाल भी रुद्रपुर में बस गया। वे सब सुख से रहने लगे।





बगदाद शहर में, एक बूढ़ा रईस रहा करता था। उसका शहर में एक घर था। घर क्या था राजमहल-सा था। घर के सामने सुन्दर बगीचा था। घर में मखमल लगे आसन रखे थे। उसके कितने ही नौकर चाकर थे। मगर उसका मन बड़ा निर्दय था। मरे पीटे गरीबों और अनाथों को तङ्ग करने में उसे मजा आता था। बड़ा विचित्र स्वभाव था उसका।

एक दिन वह बराण्डे में गद्दों पर बैठा था। उसके सामने एक भूखे अभागे ने झुककर सलाम किया। उस अभागे का नाम शक्काशिक था। जब से उसका पिता गुज़रा था, वह भीख माँग कर गुजारा कर रहा था।

बूढ़े ने उसे देखकर बड़े प्यार से पूछा-"क्यों बेटा, तुम क्या चाहते हो?"

"बाबू! थोड़ा दान दीजिये, पेट जला जा रहा है।" शक्काशिक ने कहा।

बूढ़े ने गुस्से में कहा-"या अल्लाह, क्या कहा? मेरे रहते इस शहर में लोग भूखे मर रहे हैं? यह में नहीं सह सकता। मुझसे देखा नहीं जाता।"

"आप पीढ़ियों खुशहाल रहें, हुज़र, में अब यह भूख न सह पाऊँगा।" शक्काशिक ने कहा।

"तब क्या है? तुम यहीं रहो, मेरे साथ बैठकर खाना खाना।" बूढ़े ने कहा। फिर उसने एक लड़के को बुलाकर कहा कि हाथ धोने के लिए पानी तैयार रखे। फिर एक तरफ हटकर सुराइयों में से पानी उड़ेलकर उसने यह दिखाया कि मानों हाथ धो रहा हो। "तुम भी हाथ धो लो।" बूढ़े ने कहा। वह हाथ पोछने का अभिनय करने लगा।

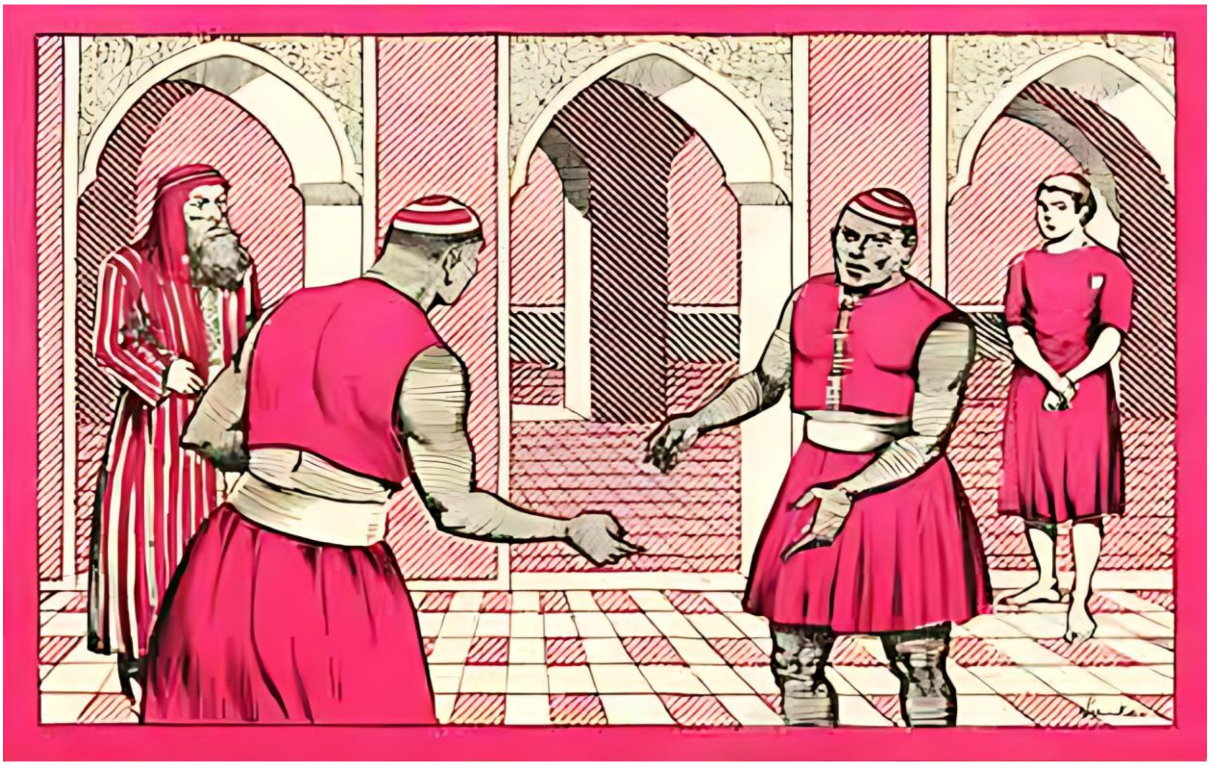
रामनारायण

शक्काशिक न समझ सका कि यह सब अभिनय किसलिये हो रहा था। बुढ़े के परिहास का मन ही मन आनन्द लेते हुये उसने भी हाथ धोने का धीमे धीमे दिखावा किया।

"अरे, मेज पर मेजपोश बिछाकर जल्दी खाना परोसो। विचारा यह बहुत भूखा है। बूढ़े ने नौकरों को बुलाकर रौब से कहा। तुरन्त बहुत-से नौकर भागे भागे आये। कई ने मेज पर मेजपोश बिछाने का दिखावा किया। कई ने यह दिखाया कि मानों थाल लगाये जा रहे हैं। कई ने यह दिखाया कि चीजें लाई जा रही हैं। शक्काशिक यद्यपि भूख से मरा जा रहा था तो भी यह सब नाटक देखता वह रह गया। वह जानता था कि रईसों के शौकों की नुक्ताचीनी करना गरीबों के लिए खतरनाक था। विचारा क्या करता?

"बैठो भाई, शुरू करो।" कहकर बूढ़े ने ऐसा अभिनय किया, जैसे, सामने रखी चीज़ों को, अलग अलग स्वाद चख चख कर, चबा रहा हो।

"शर्माओ मत। जितना तुम चाहो, उतना खाओ। देखा, यह रोटी कैसी है?



कितनी सफेद हैं।" बूढ़े ने उस विचारे अभागे से कहा।

"इतनी सफेद रोटी मैने पहिले कभी नहीं खाई है। इसका स्वाद भी बड़े मजे का है।" कहकर शक्काशिक ने भी खाने का अभिनय किया।

बूढ़े ने उन रोटियों के बनानेवाले नीग्रो रसाइये की प्रशंसा की। उसने यह भी बताया कि वह उसको कितना वेतन दे रहा था। उसने सामने रखे शाक-सालनों का वर्णन किया। उनके स्वाद और सुगन्धी की प्रशंसा की। उसका वर्णन सुनकर शक्काशिक की भूख और भी चढ़ गई।

भोजन के बाद बूढ़े ने हलवा, मिठाइयाँ वगैरह, लाने के लिए कहा। नौकरों ने यह दिखाया, जैसे वे लाकर रख दी गई हो। बूढ़े ने भी, पहले की तरह उनका वर्णन किया। प्रशंसा की। फिर उसने अपने अभागे अतिथि से उनका स्वाद पूछा।

उसके बाद बूढ़े ने फल व पेय लाने के लिए कहा। नौकरों ने यह दिखाया कि जैसे मेज पर तश्तरियाँ हटा दी गई हो। और शराब वगैरह लाकर रख दी गई हो।



"पीओ, बेटा, इस तरह की शरबत कहीं न मिलेगी। यह शराब देखी? यह बहुत पुरानी है। पिओ, आराम से पीओ।" उसने अपने अतिथि से कहा और स्वयं उसने ओठ पर ग्लास इस तरह रखा जैसे पी रहा हो।

तब तक तो शक्काशिक, जैसे तैसे उसका अभिनय सहता आया था, मगर वह और न सह सका। वह झट से उठा और तड़ाक से अपने हाथों से उसने उसके गले पर एक जमा दिया।

बूढ़ा गुस्से में चिल्लाया-"क्या कर रहे हो? अरे चाण्डाल।"

"मालिक! मैं आपका गुलाम हूँ। आपको मुझे वह तेज शराब नहीं पिलानी चाहिये थी। मुझे पीने की आदत नहीं है। इसलिए नशा चढ़ गया है।" शक्काशिक ने कहा।

यह सुन बूढ़ा, ठहाका मार कर हँसा। "अरे वाह! मैंने इस तरह कितनों को ही सताया है। पर किसी ने भी इतनी सहनशक्ति न दिखाई, जितनी तुमने दिखाई है। तुममें जितनी खुश मिजाजी है उतनी मैंने किसी में नहीं देखी है। मुझे अच्छा सबक सिखाया है। बैठो, इस बार इसलिए कि मैं तुम्हारे लिए असली दावत मँगाता हूँ।"

तब सचमुच खाने की चीजें ही मेज पर रखी गईं। उससे पहले जिन वस्तुओं की, बूढ़े ने प्रशंसा की थी, शक्काशिक ने इस बार सचमुच उनको खाया। खाकर वह खुश भी हुआ।

उसके बाद शक्काशिक कभी भूख के लिए न तड़पा। क्योंकि जब तक वह जीवित रहा बुढ़े ने उसको अपने साथ, दिन में दो बार भोजन खिलाया।





[१७]

[पद्ममुखी ने निश्चय कर लिया था कि जो कोई उसके पति के धनुष से बारह कुल्हाडियों के मूठ के छेदों से बाण निकाल देगा वह उससे विवाह करेगी। वह बूढ़े भिखारी के बेष में आये हुये अपने पति को न पहचान सकी। इसलिये उसने उससे यह कह दिया। अगले दिन उसने अपने निश्चय के बारे में उन लोगों से भी कहा जो उसके घर में बैठे उसका खाना खा रहे थे। उसने रूपधर के धनुष और बाण माँगवाकर उनके सामने रखवाये।]

एक एक करके, बारी बारी से उन्होंने धनुष पर बाण चढ़ाने की कोशिश की, पर असफल रहे। यह देख दुर्बुद्धि ने कालू को बुलाकर कहा-"अरे, उस बाण पर चरबी लगाकर आग में सेको।" कालू ने वैसा ही किया, पर उससे कोई फायदा न हुआ।

जब वे दुष्ट धनुष पर जुटे हुये थे, सूअरों का रखवाला और ग्वाला बाहर गये। यह देख रूपधर भी बाहर गया। उनको बुलाकर धीमे से कहा-"जो मैं कहूँ उसे जरा ध्यान से सुनो। अगर तुम्हारा मालिक रूपधर वापस आये तो तुम उसकी क्या मदद करोगे? इन सब का विरोध करके उसकी तरफ से लड़ोगे? बिना कुछ छुपाए सच सच बताओ। तुम्हारा कोई कुछ न बिगाड़ेगा।"



जब उन दोनों ने शपथ ली कि वे उसकी तरफ से लड़ेंगे तो रूपधर ने उनसे कहा-"मैं ही रूपघर हूँ। तुम ही दोनों ऐसे दीख रहे हो, जो मेरे वापस आने पर खुश हैं। अगर भगवान की कृपा से मैं अपने शत्रुओं का नाश कर सका तो तुम्हें बहुत-सा ईनाम दूँगा। भूमि दूँगा। धन दूँगा। अगर तुम्हें यह सन्देह हो कि मैं रूपधर नहीं हूँ तो यह दाग देखो।" उसने अपने जाँघ का दाग उनको दिखाया।

दोनों नौकरों ने अपने मालिक को देखकर.... आनन्दाश्रु बहाये।

"अब सन्तोष और आँसू बहाने के लिए समय नहीं है। पहले में अन्दर जाऊँगा। फिर तुम दोनों एक एक करके आओ। मैं बाण माँगूँगा, वे देंगे नहीं। तब सूअरों के रखवाले को बाण लाकर देना होगा। फिर स्त्रियों के पास जाकर कहना होगा कि वे अपने कमरों में चली जायें, और अन्दर से किबाड़ बन्द कर लें। अगर, खलबली गड़बड़ी भी हो तो उनको बाहर नहीं आना चाहिये। सुखप्राप्ति, तुम बाहर जाकर ड्योढ़ी बन्द कर दो।" रूपधर ने कहा।

फिर वे तीनों एक के बाद एक करके अन्दर गये और अपनी अपनी जगह बैठ गये। उस समय विपुल योद्धा, धनुष पर बाण चढ़ाने की कोशिश कर रहा था। यह उसे न झुका सका। वह निराश हो, गुनगुनाने लगा-"हम बड़े अभागे हैं, शादी की बात छोड़ो, शादी ही करनी है तो यही नहीं, इथाका में कितनी ही स्त्रियाँ हैं। पर मुझे तो यह खेद है कि रूपधर की तुलना में हम कितने बलहीन हैं। हमारी पीढ़ी को देखकर आनेवाली पीढ़ी क्या सोचेगी? हम रूपधर के धनुष पर बाण भी न चढ़ा सके।"

दुर्बुद्धि ने यह सुनकर कहा-"यों ही फालतू बातें न करो। आज पर्व का दिन है। हमें धनुष के बारे में फिक्र नहीं करनी चाहिये। उसे वहाँ रहने दो। किसी और दिन उसे आजमायेंगे।"

यह बात सबको अच्छी लगी। सब के भोजन करने के बाद रूपधर ने कहा-"महाशयो! यह बाण जरा मुझे एक बार दीजिये। आप तो अब उसे आजमा ही नहीं रहे हैं। मैं देखना चाहता हूँ कि मुझ में कितनी ताकत है। पर मेरा बल तो कभी का क्षीण हो चुका है। बूढ़ा हो गया हूँ।"

सबको बड़ा गुस्सा आया और ड़र लगा कि कहीं वह बूढ़ा बाण चढ़ा ही न दे। दुर्बुद्धि ने गुस्से में आकर कहा-"अरे नीच, क्या तेरी अक्ल मारी गई है? लगता है शराब सिर तक पहुँच गई है। अगर तुमने सचमुच धनुष पर बाण चढ़ा दिया तो क्या तुम सोच रहे हो कि तुम जीते बच सकोगे?"

"दुर्बुद्धि! क्यों मेरे पुत्र के अतिथि को बाण देने से इनकार करते हो? क्या इसलिए कि वह बाण चढ़ाकर



मुझ से शादी करेगा? तुम यह क्यों सोचते हो कि उसका यह उद्देश्य है?" पद्ममुखी ने कहा।

"हमें ऐसा कोई भय नहीं है। जो बाण हम नहीं चढ़ा पाये हैं, अगर उसने कुल्हाड़ियों के मूठ के छेदों से निकाल दिया तो हमारा कितना अपमान होगा।" विपुल योद्धा ने कहा।

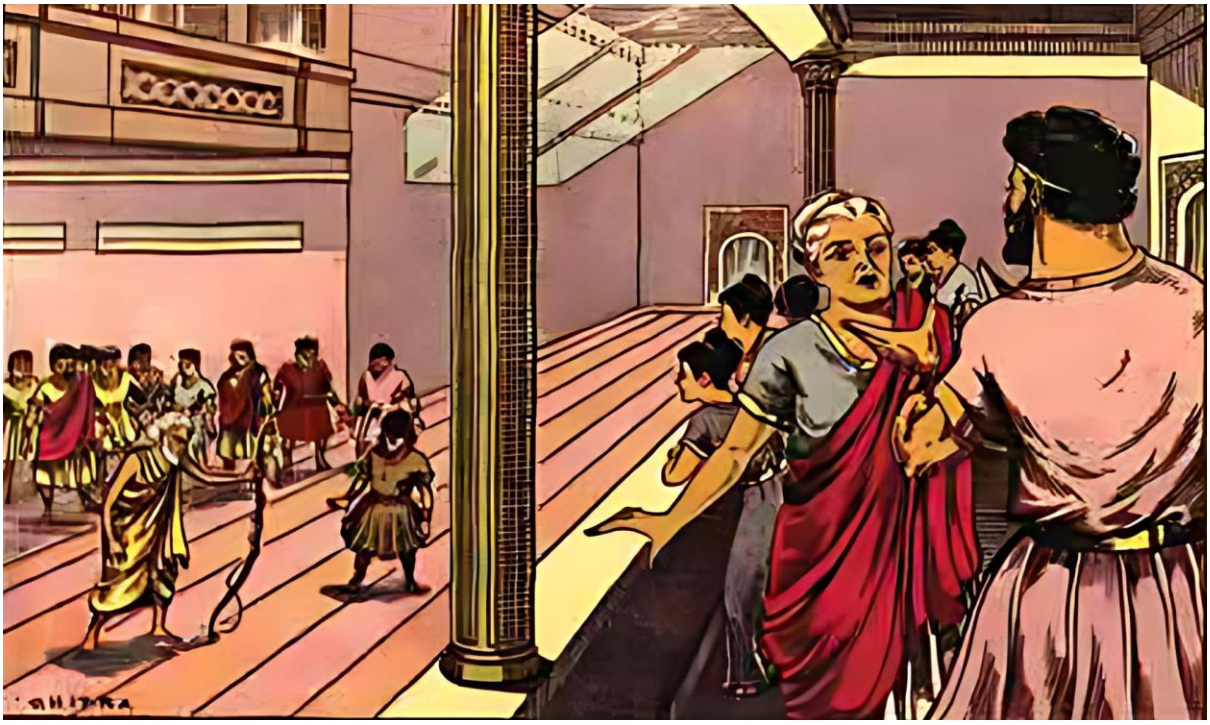
"यों तुम इस झमेले में क्यों पड़ती हो? अगर मैं जिसको चाहूँ वह बाण दान भी दे हूँ तो मुझे रोकनेवाला इस देश में कोई नहीं है।" धीरमति ने कहा।

इन बातों के कारण पद्ममुखी को आश्चर्य हुआ और आनन्द भी। खुश थी कि उसका लड़का लायक बन रहा था। वह अपने कमरे में चली गई।

इस बीच सूअरों का रखवाला धनुष लेकर रूपधर की ओर चला। यह देख सब जोर से चिल्लाये। उनका चिल्लाना सुन सुअरों का रखवाला डर गया और उसने नीचे बाण छोड़ दिया। परन्तु धीरमति ने तुरन्त उसको उत्साह दिलाया-"उनकी बकवास से तुम्हें क्या मतलब? तुम्हें अपना काम करना चाहिये।"

सूअरों के रखवाले ने रूपधर को धनुष देकर स्त्रियों की जगह के पास जाकर बहुकीर्ति से कहा- "स्त्रियाँ सब कमरों में चली जायें, और अन्दर से किवाड़ बन्द कर लें। अगर कुछ खलबली भी हो तो वे बाहर न निकलें।" उसे कुछ न पता लगा कि क्या बात थी। फिर भी उसने वह किया जो सूअरों के रखवाले ने कहा था। सुखप्राप्ति धीमे से बाहर खिसक गया और उसने ड्योढ़ी बन्द कर दी।

इतने में रूपधर ने बाण को पकड़कर इधर उधर घुमाकर देखा। सबकी नजरें

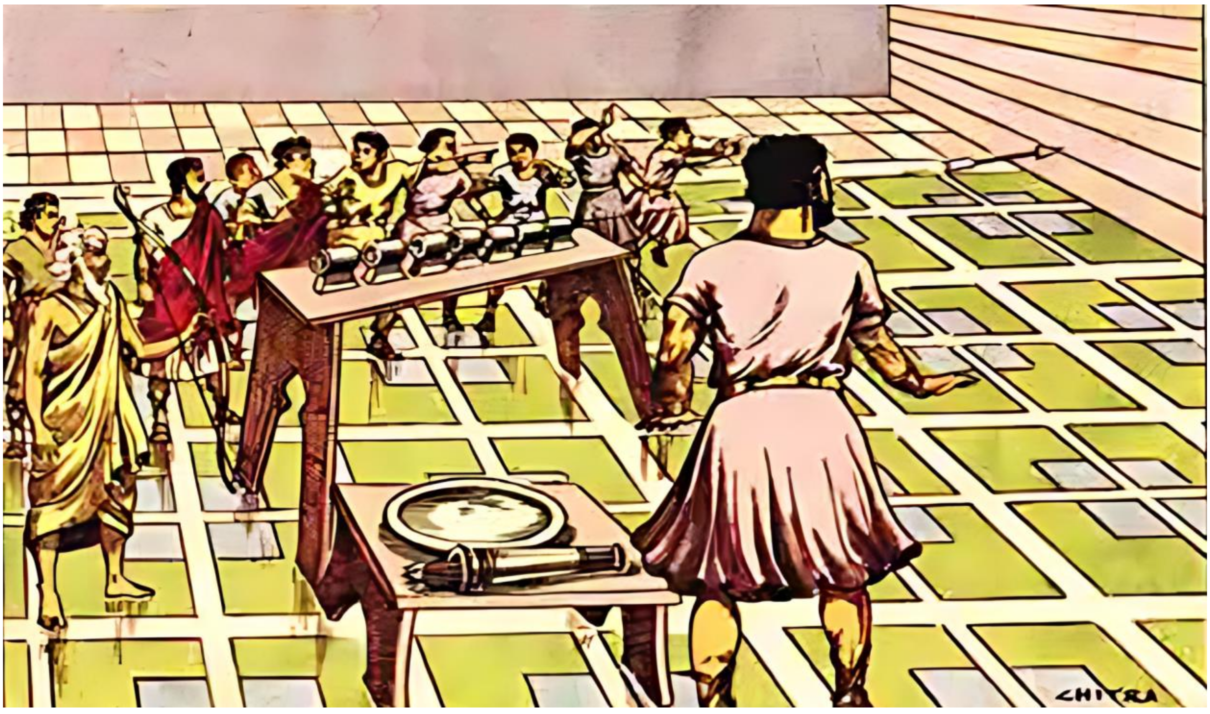


उसी पर गड़ी थी। "लगता है यह बाण आदि के बारे में जानता समझता है। शायद वह इस तरह के बाण तैयार करने की सोच रहा है। फिर भी देखें कि वह बाण लगाकर क्या पाता है।" उन्होंने तरह तरह की बातें सोचीं और कहीं।

रूपधर ने धनुष का निरीक्षण समाप्त करके आसानी से उस पर बाण चढ़ाकर धनुष को दायें हाथ में पकड़कर उसने बायें हाथ से धागा देखा। उसमें अच्छी आवाज हुई। सब हैरान हो गये। रूपधर ने तरकश में से चुनकर एक अच्छा बाण चढ़ाया और निशाना लगाकर उन कुल्हाड़ियों के मूठों के छेदों से पार कर दिया।

फिर उसने अपने लड़के से कहा- "बेटा, मैंने तुम्हारा अपमान न होने दिया। मैंने बाण लगाया और निशाने पर छोड़ दिया। ये बड़े लोग चाहे कुछ भी कहें, मेरा बल अभी कम नहीं हुआ है। अन्धेरा हो रहा है, इन लोगों के लिए भोजन रखवाओ। उसके बाद, नृत्य, सङ्गीत आदि का मनोरञ्जन का कार्यक्रम तो है ही।"

तुरन्त धीरमति एक पैनी तलवार और तेज भाला लेकर अपने पिता के पास आकर





खड़ा हो गया। रूपधर ने अपने चीथड़े निकाल कर फेंक दिये। एक छलाँग में चबूतरे पर जा खड़ा हुआ। बाकी बाणों को अपने पैरों के पास घसीट कर कहा-"असली खेल तो अब शुरु हुआ है। मैं इस बार एक और निशाने पर बाण छोड़नेवाला हूँ, उसे अभी तक किसी ने नहीं मारा है।" उसने बाण चढ़ा कर दुर्बुद्धि पर छोड़ा।

न दुर्बुद्धि ने न किसी और ने सपने में भी सोचा था कि वह बाण उसे लगेगा। दुर्बुद्धि जब एक बड़ी सुराई को दोनों हाथों से पकड़ कर शराब पी रहा था तब उसके गले में आकर वाण लगा। सुराई उसके हाथ से गिर पड़ी और उसके एक तरफ लुढ़क गई।

तुरन्त हाहाकार शुरु हो गया। सब अपने अपने आसनों से उठकर हथियारों के लिए दौड़े। दीवारों पर उन्हे देखा। दीवारें सब खाली थीं।

"अरे! आदमी को मारते हो। दुष्ट, देख तेरे प्राण अभी निकालते हैं।" वे चिल्लाये। तब भी वे असलियत न देख सके। उनका ख्याल था कि गलती से उस भिखारी ने दुर्बुद्धि पर बाण छोड़ा था।

रूपधर ने भौंहे चढ़ाकर उनसे यों कहा-"कुतो! तुमने सोचा था कि मैं ट्रोय नगर से वापिस नहीं आऊँगा। इसी भरोसे तुमने मेरे घर की सारी सम्पत्ति खा डाली। मेरे जीते जी मेरी पत्नी से शादी करने की सोची। तुम्हे न भगवान का डर है न मेरा ही ड़र है। यम का फन्दा अब तुम्हारे गलों पर लग रहा है।" भय के कारण किसी के मुख से आवाज न निकली।

केवल विपुल योद्धा ने कहा-"अगर तू सचमुच रूपधर है तो तेरी बातों में सच्चाई है। हमसे बहुत अन्याय हुआ है। इन सबका मूल कारण दुर्बुद्धि है। वह केवल तेरी पत्नी के लिये ही न आया था; परन्तु तेरे लड़के को मार कर तुम्हारी सम्पत्ति भी हथियाने के उद्देश्य से आया था। हम तुम्हें हरजाना देंगे। जितनी शराब हमने पी है वह सब वापस दे देंगे। हम आपस में चन्दा इकट्ठा करेंगे। एक एक बीस बैल देगा। तब तक तुम्हें गुस्सा करने का अधिकार है।"

"तुम लोगों द्वारा किये हुये अत्याचारों का एक ही हरजाना है। वह है तुम्हारे प्राण। तुम सबके में प्राण लूँगा। तुम भाग भी नहीं सकते।" रूपधर ने कहा।

विपुल योद्धा ने अपने अनुचरों से कहा-"भाइयो, लगता है इसने निश्चय कर लिया है। आओ सब मिलकर तलवार निकाल कर एक साथ हमला करें। कितनों को यह मार सकता है? अगर हमने गली में जाकर हल्ला किया तो सब भागे आयेंगे। तब वे इसकी खबर लेंगे।"



वह तलवार लेकर रूपधर पर उपका ही था कि रूपधर का बाण उसकी छाती पर लगा।

बाकी लोग भी रूपधर की ओर लपके। कुछ को धीरमति ने अपने भाले से गिरा दिया। उनने पिता से कहा-"पिता जी, आपके लिये, सूअरों के रखवाले और ग्वाले के लिए हथियार ले आता हूँ।"

"बाणों के खतम होने से पहले ले आ।" रूपधर ने कहा। धीरमति सामान बाले कमरे में जाकर चार ढाल, आठ

भाले, चार कवच तुरन्त ले आया। चारों उन्हें पहन कर दरवाजे के पास खड़े हो गये।

बाणों के ख़तम हो जाने के बाद रूपधर ने बाण छोड़कर भाला पकड़ा। तब तक कुछ मारे जा चुके थे। पर कुछ बाकी थे। इस समय कालू ने अपने मालिकों की सहायता की। वह पिछवाडे के रास्ते से जाकर एक दर्जन भाले, ढाल कवच सब के लिए ले आया।

यह देख रूपधर ने कहा-"घीरमति, लगता है घर की दासियाँ उनकी मदद कर रही हैं।"

"पिताजी, गलती मेरी है। मैं जल्दी में सामानवाले कमरे का ताला लगाना भूल गया।" यह कहकर सूअरों के रखवाले को सामानवाले कमरे में ताला लगाने के लिए भेजा। जब दूसरी बार कालू कमरे में जा रहा था.... यह सूअरों के रखवाले द्वारा पकड़ा गया।

उसके बाद दोनों पक्षों में भालों से युद्ध हुआ। सौभाग्य से शत्रुओं के भालों में से कोई भी भाला न रूपधर को लगा न धीरमति को ही। परन्तु उनके भालों के शत्रु शिकार हुये। भालों के युद्ध के बाद दोनों पक्ष हाथापाई करने लगे।

उस दिन देवता रूपधर के साथ थे। उसके सब शत्रु आखिर मारे गये। दो को उसने जान बूझकर छोड़ दिया। वे निरपराधी थे। सारा हॉल लाशों से भर गया था। रूपधर ने बूढ़ी दायी को बुलाकर कहा-"दासियों से यह हॉल धोकर साफ करवाओ। नौकरों से कहो कि इन शवों को बाहर रखवायें।" हॉल को साफ करने के बाद उसमें धुआँ किया गया।

(अगले अङ्क में समाप्त)





विक्रमार्क ऊबा नहीं। वह फिर एक बार पेड़ के पास गया। पेड़ पर से शव उतार कर, कन्धे पर डाल, श्मशान की ओर पहले की तरह मौन हो चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा-

"राजा लोग बिलासी होते हैं। वे हमेशा नये नये विलास चाहते रहते हैं। तुम्हारे जैसा जीवन कोई भी राजा नहीं बिताता। कई राजाओं के लिए, जो सुख प्राप्त हैं, काफी नहीं होते, नये मिलते नहीं, इसलिए उन्हें बहुत व्यथा होती है। यह दिखाने के लिए तुम्हें महाराजा सत्यजीत की कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यों कहानी सुनानी शुरु की।

हस्तिनापुर के राजाओं में सत्यजीत भी एक था। चन्द्रवंश के इस राजा ने कुरु



और पाञ्चाल देशों पर बहुत समय तक राज्य किया। उसके समय में देश सुखी था। जनता में न युद्ध भय था, चोर भय था, न अग्नि भय ही, धर्म चारों पैरों पर था। प्रजा बहुत सुखी थी। राजा के तो कहने ही क्या? इन्द्र के वैभव से भी उसका वैभव अधिक था। उसने सब तरह से सुखों का आनन्द किया। परन्तु होते होते उसके हृदय में एक विचित्र व्यथा घर करती गई। उसकी आनन्द पाने की शक्ति स्वतम हो गई। सब राज वैद्य मिलकर भी उसकी व्यथा दूर न कर पाये। मन्त्रियों ने उससे कहा-"महाराज, बताइये आप क्या चाहते हैं? चाहे उसको लाना कितना ही कठिन हो, हम उसे लाकर आपको आनन्दित करेंगे। हमारे सामने आपको कुछ छुपाने की जरुरत नहीं है।"

राजा ने निश्वास छोड़कर कहा-"मुझे क्या देखकर आनन्दित होने के लिए कहते हो? जीवन शुष्क-सा हो गया है। मुझे किसी चीज़ में भी न्याय नहीं दिखाई देता है।"

यह जान कर कि राजा को वैराग्य हो गया है, मन्त्रियों ने तत्ववेत्ताओं को बुलाकर वेदान्त पर उपदेश करवाये। परन्तु तत्ववेत्ताओं के उपदेशों से राजा और भी ऊब गया।

एक दिन राजमहल में शौनक महामुनि आया। मन्त्रियों ने उनको राजा की मनःस्थिति बताकर कहा-"स्वामी! हमारे राजा प्राप्त सुखों से असन्तुष्ट हो गये हैं। उनके लिए नयी सुख की चीजें बनाने के लिए हमारे पास आवश्यक शक्ति नहीं है। हमें कृपया कोई मार्ग दिखाइये।" शौनक महामुनि ने सब सुना। सिर हिलाते हुए उसने कहा-"तुम्हारे राजा

के लिए मैं नये नये सुख दिखाऊँगा। तुम चिन्ता न करो।"

फिर उसने राजमहल में राजा को देखकर कहा-"राजा! मैं तुम्हारी थोड़ी मदद करना चाहता हूँ। आओ, महल के ऊपरवाले तुम्हारे रहस्यकक्ष में चलें।" राजा श्रद्धापूर्वक शौनक महामुनि को अपने रहस्य गृह में ले गया।

"राजा, तुम उस दक्षिण की तरफ की खिड़की के पास जाकर तो देखो।" महामुनि ने कहा।

राजा ने उठकर दक्षिण की तरफ की खिड़की में से देखा उसका माथा ठनका। हृदय की धड़कन यकायक तेज हो गई। उसके किले के बाहर शत्रुओं के खेमें दिखाई दिये। लाखों सैनिक जोर से चिल्लाते उसके किले की दीवारों पर चढ़ रहे थे।

राजा ने मुड़कर कहा-"स्वामी, मुझ पर सब राजा आक्रमण करने आ रहे हैं।"

"ठीक तरह देखो वे कौन हैं।" मुनि ने कहा।

राजा ने फिर खिड़की में से देखा। पर वहाँ कोई न था।



फिर उसने पूर्व की खिड़की में से देखा। ऐसा लगा जैसे यमुना में बाढ़ आ गई हो और बाढ़ की तरङ्गें, उसके किले की दीवारों से टकरा रही हों। पर जब उसने फिर देखा तो वहाँ कुछ न था।

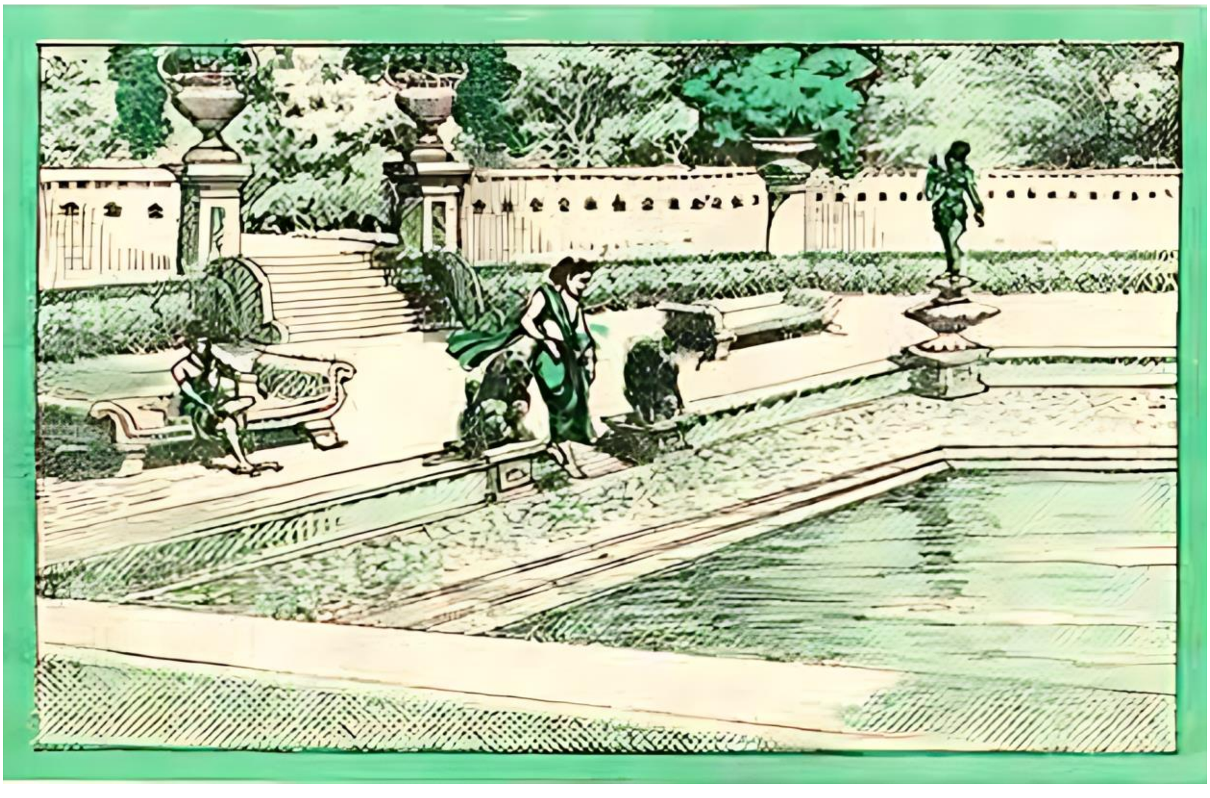
फिर उसने उत्तर की खिड़की में से देखा। उसे दिखाई दिया कि सारा हस्तिनापुर जल रहा था। राजा ने डर के मारे आँखें मूँद लीं। फिर जब खोली तो नगर में कुछ न था।

इसी तरह राजा ने पश्चिम की खिड़की में से देखा। वह प्रदेश, जहाँ हरी फसलें

लहलहायी करती थीं मरूभूमि-सा था। उसमें कहीं कहीं पत्थर और जन्तुओं की हड्डियाँ दिखाई दी। वह दृश्य दीखते ही राजा के आँखों से आँसू निकल पड़े। उसने आँसू पोंछकर जब फिर देखा तो वहीं फसले, बाग-बगीचे दिखाई दिये। राजा ने अपने आसन पर बैठकर पूछा-"स्वामी, जो दृश्य मैंने देखे हैं वे सच हैं या भ्रम? क्या वे दृश्य कभी ऐसे थे, या कभी होने जा रहे हैं?"

"बेटा! जो एक बार हुआ है, वह फिर होता है। कल जो हुआ और कल जो होने जा रहा है, उसे जब हम आज देखते हैं, तो वह भ्रम लगता है। जो तुमने दृश्य देखे हैं, लगता है, उन्हें देखकर तुम दुःखी हुए हो। आराम से नहा धोकर आओ।" मुनि ने कहा।

राजा मुनि को साथ लेकर उस तालाब के पास ले गया, जहाँ वह जलक्रीड़ा किया करता था। मुनि किनारे पर बैठा रहा। राजा ने तालाब में प्रवेश किया। राजा ने सिर पानी में डुबोया ही था कि पानी कल्लोलित-सा लगा। राजा जान गया कि उसने एक समुद्र में डुबकी लगाई थी और



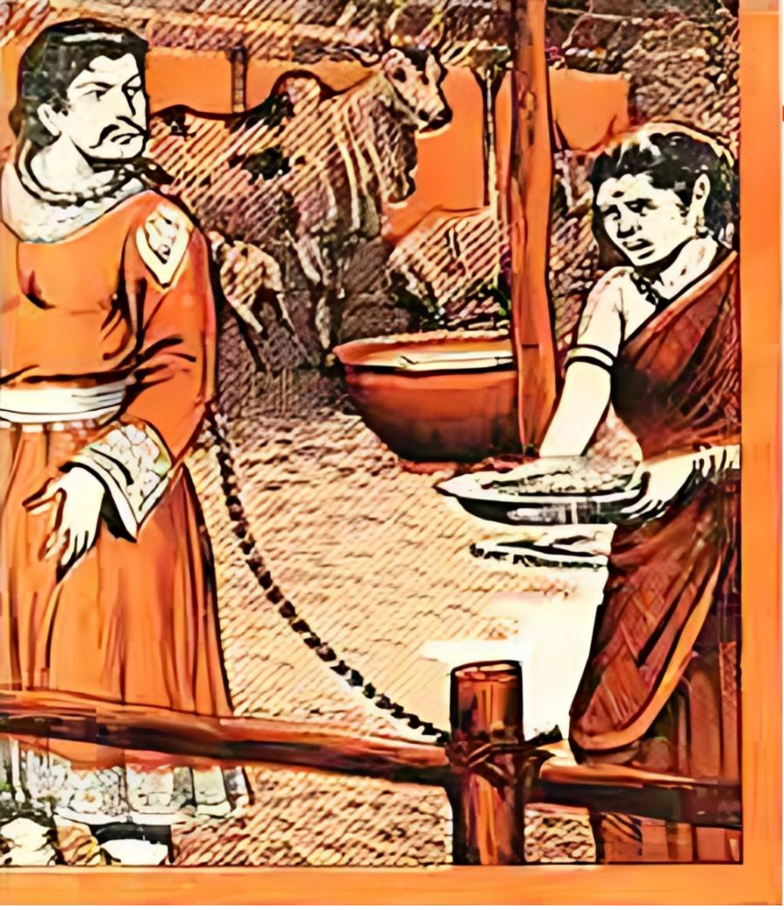
समुद्र में तूफान आ रहा था। उस समुद्र में तैरता, बड़ी बड़ी तरङ्गों की थपेड़ें खाता वह एक किनारे पर पहुँचा। जब वहाँ वह पहुँचा, तो गाँव के कुछ लोग जमा हो गये और उसको आश्चर्य से देखने लगे।

"क्या यों देख रहे हो? मैं हस्तिनापुर का राजा सत्यजीत हूँ। तुम सब जाओ।" उसने उनको आज्ञा दी। वे जोर जोर से हँसने लगे। उसमें से एक ने राजा के पास आकर पूछा- "सिर पर यह पीतल की टोपी क्या है? और यह साड़ी सी क्या पहने हुए हो?" कहते हुए उन्होंने सिर पर रखे मुकट और शरीर पर ओढ़े उत्तरीय को समुद्र में फेंक दिया- "अफ़सोस कि ऐसे देश में आ पहुँचे। अगर जी तोड़ मेहनत की तो यहाँ जी लोगे। इन खुरपे फावड़ों को सिर पर रखकर हमारे साथ आओ। हम आज का काम खतन करके घर जा रहे हैं।" उसने कहा।

राजा को बहुत गुस्सा आया। पर वह कर ही क्या सकता था? "मुझे बोझ उठाना नहीं आता।" उसने कहा।

"आदमी हो और वह काम भी नहीं आता जो बैल करते हैं?" कहते हुए खुरपे





फावड़े बाँधकर उसने राजा के सिर पर रख दिये।

राजा वह बोझ ढोता उसके साथ उसके घर गया। उसने अपनी पत्नी से कहा-"देख, इस आदमी को आदमी का काम नहीं आता है। अभी बैल का काम सीख रहा है। इसे पिछवाड़े में बैलो की जगह बाँध दो और थोड़ा दाना-पानी दो।"

राजा ने उस दिन दाना पानी खाया। अगले दिन वह बैल बन गया। जब उस किसान ने उससे बैलों के काम करवाने चाहे तो राजा जरा अड़ गया। किसान को गुस्सा आया। उसने उसको किसी कोल्हूवाले के पास बेच दिया। कोल्हूवाले ने उसे कोल्हू में जोत कर दिन रात चलाया। जब कभी बैल खड़ा होता तो उसे वह कोड़ा मारता। उस बैल को दिन में दो बार खाना खाने के लिए ही खोला जाता। इस प्रकार पाँच वर्ष बीत गये। एक दिन कोल्हू के ऊपर की छत गिर पड़ी। वह बेहोश हो गया।

जब उसे होश आई तो राजा मनुष्य के रूप में किसी और देश में था। पास ही तालाब में औरतें कपड़े धोकर नहा धो रही

थीं। राजा को भूख लग रही थी।

इतने में एक व्यक्ति ने राजा के पास आकर पूछा-"तुम कौन हो? तुम इस देश के तो नहीं हो!"

"नहीं, मुझे भूख लग रही है।" राजा ने कहा।

"इस देश में जब तक पत्नी नहीं देती किसी को कोई खाना नहीं मिलता। तुम्हारी पत्नी है?" उस व्यक्ति ने पूछा।

"मेरे देश में है।" राजा ने कहा।

"तो किसी कुमारी को देखकर शादी कर लो। तुम्हें खाना मिलेगा।" उस

व्यक्ति ने कहा।

"पर कैसे शादी की जाय?" राजा ने पूछा।

"जो कोई उस तालाब से नहा कर आये उन सब से पूछना-'क्या तुम्हारी शादी हो गई या तुम कारी हो?' समझे, सब से पूछना होगा। किसी को छोड़ना मत। अगर उन में कोई कारी होगी तो वह तुरन्त तुम्हारी पत्नी हो जायेगी।" यह कह कर वह व्यक्ति आगे बढ़ गया।

राजा ने वहीं खड़े होकर तालाब की ओर देखा। सोलह वर्ष की एक लड़की बगल में कलश रख कर उस तरफ आई।

"क्या तुम्हारी शादी हो गई है? क्या तुम अकेली हो?" राजा ने पूछा।

"पिछले साल ही शादी हुई है।" कह कर वह आगे बढ़ी। उसके पीछे पचास वर्ष की एक बूढ़ी आई। उससे भी राजा ने वही प्रश्न किया।

"विवाह हो गया है, बेटा।" कह कर वह भी चली गई।

उसके बाद अस्सी वर्ष वाली एक बुढ़िया लाठी टेकती टेकती आई। राजा ने हँसते हुये उससे भी वही पूछा।

"मैं अकेली हूँ, चलो चलें।" बुढ़िया ने राजा का हाथ पकड़ लिया।



राजा ने जब हाथ छुड़ाना चाहा तो वह जोर से चिल्लाई। राजा जैसे तैसे बुढ़िया की पकड़ छुड़ा कर तालाब में जा कूदा। राजा जब पानी में से ऊपर उठा तो वह अपने ही तालाब में था। पर किनारे पर मुनि न था। वह स्नान समाप्त करके बाहर आया। परन्तु अब वह जिस किसी चीज़ को देखता तो उसे आनन्द होता, उसका घर स्वर्ग के समान था। पत्नियाँ अप्सराओं की तरह थीं। भोजन अमृत तुल्य था। नौकर-चाकर देवताओं की तरह थे।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा-"राजा, मुझे एक सन्देह है। शौनक महामुनि ने मनोव्याधि को कैसे दूर किया? उसने राजा को नये सुख दिखाने की अपेक्षा क्यों नये दुख और कष्ट दिखाये? इसका क्या कारण था? अगर तुमने जान बूझकर उत्तर न दिया तो तुम्हारा सिर टुकड़े टुकड़े हो जायेगा।"

"सुख जिन चीज़ों से मिलता है उनकी कोई सीमा नहीं है। सत्यजीत के पास सब सुख सामग्री थी। पर उनका सुख पाने के लिए उसमें शक्ति न रही थी। इसलिए उसे मनोव्याधि हो गई थी। शौनक महामुनि यदि उसे नये सुख दिखाता तो शीघ्र वह उनसे भी ऊब जाता। इसलिए महा मुनि ने राजा को सुख अनुभव करने की शक्ति फिर से दी, यह कष्टों के सहने से ही पुनः मिलती है। इसलिए महामुनि की चिकित्सा का राजा पर असर हुआ।" विक्रमार्क ने जवाब दिया।

राजा क इस प्रकार मौन भङ्ग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य होकर पेड़ पर जा बैठा।

(कल्पित)



CHANDAMAMA (Hindi) DECEMBER 1958 Regd. No. M. 5452

